रणांगण

रणांगण

मूल •
विश्राम बेडेकर

रूपान्तर
माधव मोहोलकर

भारतीय ज्ञानपीठ
प्रकाशन

लोकोदय ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक-२८४
सम्पादक एवं नियामक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन

Lokodaya Series : Title No 284
RANAANGAN
(Novel)
VISHRAM BEDEKAR
Bharatiya Jnanpith
Publication

First Edition 1969
Price Rs 3.50

©

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

प्रधान कार्यालय
९, अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७
प्रकाशन कार्यालय
दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी-५
विक्रय कार्यालय
३६२०।२१, नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

प्रथम संस्करण १९६९
मूल्य ३.५०

सन्मति मुद्रणालय
वाराणसी-५

र । णां । ग । ण

• • •

प्रस्तुत कथा पूर्ण रूप से मौलिक और कल्पित है। सभी पात्र और घटनाएँ काल्पनिक हैं।

इस कथा के पात्रों में से किसी के नाम या स्वभाव-चित्र में किसी अन्य जीवित या मृत व्यक्ति की नाम या चरित्रगत समानता दिखाई दे तो उसे मात्र संयोग समझें। जान-बूझ कर ऐसा करने का लेखक का हेतु नहीं है।

इस कथा में जिनोआ से बम्बई तक यात्रा करनेवाली एक इटालवी बोट का उल्लेख और वर्णन किया गया है, जो पूर्ण रूप से काल्पनिक है। इस तरह की यातायात करनेवाली किसी इटालवी कम्पनी, बोट या उस के अधिकारियों के व्यवहार का वर्णन करना लेखक का उद्देश्य नहीं है।

रॉयल कमिशन सम्बन्धी जो उल्लेख यहाँ आया है वह फिलिप गिब्स की 'ऑर्डियल इन इंग्लैण्ड' नामक पुस्तक पर आधारित है। सर फिलिप उस कमिशन के सदस्य थे।

एक स्थल पर बहुत वर्ष पूर्व पढ़ी हुई एक अँगरेज़ी कविता का अवश्य उपयोग किया है।

—विश्राम बेडेकर

अनुवादक की ओर से

सन् १९५२ में मैं ने पहली बार 'रणागण' का हिन्दी अनुवाद किया। तब कॉलेज में पढता था। उस के बाद कई बार मैं ने इस पुस्तक का अनुवाद किया। कुछ पुस्तकें अच्छी लगती है, श्रेष्ठ भी लगती हैं, किन्तु कुछेक ऐसा होती हैं जिन से एक प्रकार का मोह हो जाता है। 'रणागण' से मुझे ऐसा ही एक मोह रहा है। कई बार इस का अनुवाद करके भी मुझे सन्तोप नही हुआ। जो अनुवाद इस समय प्रकाशित हो रहा है उस मे सन् १९५२ के अनुवाद का शायद एकाध ही वाक्य बच कर आया हो। कभी-कभी लगता है कि अनुवाद करने की अपेक्षा मौलिक चीज लिखना आसान है। अपने बच्चे की परवरिश करने से पराये बच्चे को अपना समझ कर पालना कठिन होता है। अपने बच्चे के साथ कैसी भी कडाई कर सकते हैं, पर पराये बच्चे को ले कर कई बातो का खयाल करना पडता है। हम तो उसे अपना समझते हैं, प्यार करते हैं, मगर लोगों को विश्वास नही आता। उन के डर से कभी उसे कुछ कह भी नही सकते, भले ही वह उसी की भलाई के लिए आवश्यक हो। अनुवाद की भी ऐसी ही विचित्र बात होती है। पुस्तक इतनी अच्छी लगती है कि अनुवाद किये बिना और अपना आनन्द दूसरो तक पहुँचाये बिना रहा नही जाता, साथ ही इस बात का भी खयाल रखना पडता है कि मूल रचना में कम से कम हेरफेर हो और फिर भी वह दूसरी भाषा में अधिक अच्छी लगे। यह कुण्ठा नृत्य नाचना आसान नही होता। ईमानदार अनुवादक की कृति सर्जना की दृष्टि से मौलिक लेखन से कम नही होती। लोगो की यह धारणा भी गलत होती है कि कविता की तुलना में गद्य-रचना का अनुवाद आसान होता है। 'रणागण' जैसी पुस्तक से पाला पडे तो फिर कविताएँ अनुवाद के लिए सरल लगने लगेंगी। श्री विश्राम बेडेकर

का भाषा इतनी समृद्ध है कि कितने ही वाक्यों का अन्य भाषाओ मे अनुवाद असम्भव-जैसा होता है। कम से कम तेरह साल की साधना प्रस्तुत अनुवाद के पीछे है। जो सुख इस उपन्यास को पढने में मुझे होता है वही अब हिन्दी के पाठकों को मिले तो समझूँगा यह साधना सफल हो गयी।

श्री विश्राम बेडेकर का मैं हृदय से ऋणी हूँ जो इस उपन्यास से मेरा प्रेम जान कर इस के अनुवाद की अनुमति देने के लिए तुरन्त तैयार हो गये।

मेरे मित्र श्री वसन्त देव ने यह उपन्यास मेरे साथ पढा और अनुवाद की दृष्टि से अमूल्य सुझाव समय-समय पर दिये इस के लिए औपचारिक रूप से उन का आभारी होना उन की रसिकता और अपनी आपस की मित्रता का अपमान करना होगा।

यह उपन्यास छप कर हिन्दी के पाठको के समक्ष आया है भारतीय ज्ञानपीठ के श्री लक्ष्मीचन्द्र जैन और मेरे मित्र डॉ० प्रभाकर माचवे के कारण। दोनो का मैं हृदय से ऋणी और आभारी हूँ।

—माधव मोहोलकर

रणांगण

(उपन्यास)

●

एक

चारो तरफ हड़बडी। सब ने अपने-अपने खास कपडे पहन लिये थे। घर आया जान कर सब चेहरे खिल उठे थे। रास्ते में जगह-जगह सामान ला कर रखा जा रहा था। सूटकेस, कैबिन-ट्रंक, हैट रखने की पिटारियाँ, टेनिस के बैग। हर एक पर रग-बिरंगे लेबल। बोट के नाम के, कस्टम वालो के नम्बरो के, कैबिन्स के, बैगेज रूम्स के। सब से सुन्दर लेबल होटलों के थे। जिस होटल मे वह सामान जाता वहाँ का लेबल उस पर लग जाता। बर्लिन, प्राग, ऐम्स्टरडम्, लॉसेन, लण्डन। नाम भी सुन्दर और चित्र भी सुन्दर। मैं उन्हें नित्य देखता। बडा मज़ा आता। लेकिन आज चारो तरफ हड़बडी। वे बैग टकरा रहे थे, उन की कोरें पाँव मे लगती, मगर किसी को परवाह न थी।

मैं केबिन मे चला गया। मेरी बर्थ ऊपर वाली थी। हाथ-पाँवो में जान नही थी। जैसे-तैसे ऊपर चढा और बिस्तरे पर पड़ गया। सिरहाने के सामने ही पोर्टहोल था। बाहर नज़र डाली। आकाश पर बादल छाये हुए थे। इस लिए सब उदास-उदास-सा लग रहा था। समुद्र डबरा बन गया था। शान्त और गँदला। बीच में ही थोडी-सी धूप निकल आयी। सामने कुछ किश्तियाँ थी। उन पर लाल कपडे पहने खलासी नजर आते। लहरें ऊपर-ऊपर चढती। उन के शिखरो पर से किश्तियाँ कूदती चली जाती ऐसी भासती जैसे पेड़ो पर कूदते बन्दर हो। बीच मे ही डोलते हुए बॉइज़[1] दिखाई देते। सामने एक दीपगृह था। दूर पर क्षितिज। उस की रेखा चमकने लगी। उसी तरफ को बोट लौट जाने वाली थी। मेरी यात्रा समाप्त हो चुकी थी। मुझे बम्बई उतरना था।

---

१. जहाज़ का रास्ता और पानी के भीतर डूबी हुई चट्टानों आदि को दिखाने वाले पीपे जो लंगर के सहारे पानी की सतह पर तैरते रहते हैं।

लेकिन मै बोट की आगे की यात्रा के बारे में सोच रहा था। दो दिन के बाद कोलम्बो, फिर सिंगापुर, मनीला, हांगकाग और आज से पन्द्रह दिन बाद शाघाई।

मै एकाएक सिहर उठा। हॅर्टा शाघाई जाने वाली थी। मुझे यही उतरना है। उतरना तो है, लेकिन उठने तक की इच्छा नही हो रही थी।

१

उठने की इच्छा नही हो रही थी, इतना ही नही। बम्बई आ गया। सब को खुशी हुई, पर मुझे अच्छा नही लगा। हिन्दुस्तान मेरी जन्मभूमि। दूर देश से मै लौट कर आया। पहले दर्शन से मुझे खुशी होनी चाहिए थी न ? पर मुझे दु ख हुआ ! मेरी सारी दुनिया ही बदल गयी थी। विपरीत हो गयी थी। डर लगता कि अदन गया, अब बम्बई ही आयेगा। फिर भी आशा थी। समुद्र मे तूफान था। मै सोचता, यह अगर और तेज़ हो जाये तो कितना अच्छा ! बोट धीरे-धीरे चलेगी। बम्बई देर से आयेगा। समुद्र की यात्रा स्थल की यात्रा से बिलकुल अलग होती है। चारो तरफ वही पानी ही पानी। वहाँ यह पीछे छूट गया, वह पीछे छूट गया—इस तरह के निशान नज़र ही नही आते। इस लिए मन अपने को समझा लेता कि बम्बई अभी दूर है। लेकिन निश्चित समय। वह आ ही जाता है, आ गया। हम डेक पर खडे थे। हॅर्टा एकदम पास आयी। आँखें डबडबायी हुई थी। स्वर में कातरता थी। बोली, "देखा वह ?" मै ने पूछा, "क्या ?" उस ने रोते हुए उत्तर दिया, "बॉब, वह पायॅलट बोट, बम्बई बन्दरगाह की। हिन्दुस्तान आ ही गया आखिर। अब तुम जाओगे।" और आँसू बहने लगे।

वे आँसू ! उस दिन उन की बाढ आ गयी। बोट बन्दरगाह मे आठ घण्टे खडी थी। हिन्दुस्तानी यात्री सभी अपने-अपने घर चले गये। मै बोट पर ही रहा। छूटने से आध घण्टा पहले नीचे उतरा। तो भी पाँव पीछे को खिचते। बोट पर की वह चहल-पहल थमी। दोपहर के समय नये यात्रियो की हलचल शुरू हो गयी। मेरा ध्यान उस तरफ नही था। बन्दरगाह पर आया। डेक के सामने खडा रहा। क्रेनो से सामान उठाया जा रहा था। नीचे की मज़िल पर अन्न, बीच के डेक पर यात्रियों का सामान। ऊपर के डेक पर यात्री। सब हँस रहे थे, खिलखिला रहे थे। किसी के गले में हार, किसी के हाथो में गुलदस्ते।

झकझक करते रंगबिरंगे लिबास। सिपाही, खलासी, पुलिस अफसर, दलाल, व्यापारी। सब की फिर वही भीड। ग्यारह दिन से इसे बराबर देखता आया था। हर बन्दरगाह पर वही। नेपल्स, मसावा, पोर्ट सईद, स्वेज, अदन। लेकिन तब मै डेक पर होता। आज किनारे पर था। हॅर्टा छोटी बच्ची की तरह इधर से उधर दौडती। मुझे खोचती। कहती, "बॉब, वह देखो। कितना मजेदार है न ?" आज वह सामने खडी थी। पर कुछ बोल नही पाती थी। उस के आँसू थमते नही थे। उस के पास यात्री खडे थे। एकाध खलासी आता। छेडने की कोशिश करता। लेकिन उस का ध्यान नही था। मुझे भी कुछ सूझता न था। पास के फूल वाले से मै ने एक गुलदस्ता खरीदा। एक कुली को एक आना दिया और हॅर्टा को वह गुलदस्ता दे आने के लिए कहा। उसे ताज्जुब हुआ। लेकिन वह गया। मै ने मन ही मन कहा, "हॅर्टा, लडकी, यह अन्तिम विदा !"

लेकिन यही तो आध घण्टा पहले कहा था। डेक पर गले से लिपटी उस की बाँहो को बडी मुश्किल से छुडाया और कहा, " गुडबाई फ्रेण्ड !" वह कुछ खिन्न हो गयी और बोली, "मुझे अँगरेज़ी नही आती, बॉब। तुम ने ही थोडी-सी सिखायी है। लेकिन 'गुडबाई माई डीयरेस्ट', ऐसा तुम्हे नही कहना चाहिए था क्या ?" मै ने उस का हाथ अपने हाथ मे ले लिया और कहा, "शाघाई पहुँचने के बाद तुम्हारी समझ मे आयेगा कि सिर्फ मैत्री ही बची रह गयी है ! हमारा प्यार खो गया। गुडबाई डीयर लिटिल फ्रैण्ड !" और मै नीचे आ गया।

शब्दो का कोई उपयोग है क्या ? इस लिखने का कोई उद्देश्य होगा क्या ? हॅर्टा फिर मुझे दिखने वाली नही। चढती तरुणाई। सारी दुनिया सामने। सब शक्तियाँ अधीन। और दो मानव प्राणी पास-पास आते है, हाथ मे हाथ लेते है और कहते हैं, "यह भेंट का क्षण आखिरी है !" ऐसा जीवन मे सहसा कभी होता है क्या ? मृत्यु की बेला को छोड कर ? पर हमारे जीवन मे हुआ। हलचल बढी। गैंगवे[1] ऊपर गया। कप्तान के ब्रिज पर से सीटियाँ, बोट के भोपू, खलासियो की पुकारें और लगर की प्रचण्ड घबराहट। बन्दरगाह पर के लोहे के खम्भो से बँधी बोट की रस्सियाँ ढीली हो गयी। पानी मे गिरी। उन की छपछप आवाज होने लगी। तरह-तरह की आवाजो के प्रचण्ड कोलाहल मे

१ किनारे से जहाँज पर चढ़ने-उतरने का सीढियों वाला पुल।

बन्दरगाह डूब गया। बैण्ड के मधुर स्वर गूँज उठे। यात्रियो की फिर बिदाइयाँ, फिर रुमालों का हिलाया जाना, बोट से किनारे पर फेके हुए हार और गुलदस्ते, उन की वर्षा, आँखो मे आँसू और हँसते चेहरो की बिदाइयाँ •

बोट हिली। मुझ से ऊपर देखा नही जाता था। उस कोलाहल से मेरा दम घुटने लगा। बेचारी गरीब, बेचारी हॅर्टा!

मै बिस्तरे पर पडा हूँ। बीमार नही हूँ। लेकिन उठा नही जाता। शक्ति ही नही। खिडकी मे से झुक कर देखता हूँ। शाम हो गयी है। एम्पायर होटल के नीचे का चौराहा। बम्बई मे सब से बडा। वही सब इमारतें। लोगो का भीडभडक्का। ट्रामे, बसें, मोटरें। तमाम वही कोलाहल।

सब शहर याद हो आते है। लन्दन, पैरिस, वेनिस, नेपल्स। मेरा एक मित्र है। उस मे एक अजीब पागलपन था। बात करते-करते बीच मे ही रुक जाता। शून्य मे देखता रहता। मै पूछता, "जग्गू, क्या सोच रहे हो?" उस का स्वर आकुल हो जाता। कहता, "तुम हँसोगे। अब चार बजे है। मेरे मन मे एकाएक कल्पना आती है। इस समय कलकत्ता मेल नागपुर होगी, दिल्ली एक्सप्रेस झाँसी, पजाब मेल दिल्ली स्टेशन पर और फ्रण्टियर नागदा। मद्रास मेल अभी शोलापुर से छूटेगी।" मुझे हँसी आती। लेकिन, उस का मन लगातार भटकता रहता। हम पतग उडाते। उस की कल्पना उडान भरती। पतग बहुत ऊँची जानी चाहिए। उस पर चढ कर नीचे देखा जाये तो कितना विशाल प्रदेश एक साथ दिखाई देगा? एक ही समय सभी गाडियो मे सवार हो कर उस का मन हिन्दुस्तान भर मे भटकता। कितना स्वाभाविक है यह! मै आज समझ सकता हूँ। शाम हो गयी है न? लन्दन मे अब बारह बजे है। इस समय मै पिकैडिली मे होता। और आधे घण्टे बाद लच का समय। काम पर से आता—शैफ्ट्स्बरी ऐवेन्यु होता पिकैडिली। नॉर्थ रीजेण्ट स्ट्रीट से मुड कर वाइन स्ट्रीट जाता। वहाँ एक मेरा प्रिय उपाहारगृह था। साथ मेरे ही कॉलेज की एक लडकी। मै उस से प्रेम नही करता था। वह भी मुझ से नही करती थी। लेकिन संग-साथ कितना सुखद होता! पिकैडिली के बीचोबीच एक फव्वारा है। उस पर कामदेव की एक सुन्दर प्रतिमा है। हम रोज उस फव्वारे की सीढियो पर खडे रहते।

कितनी आवाजाही! बाहनो की और पथिको की बाढ बार-बार चौराहे पर आती और शीघ्र ही बिखर कर समाप्त हो जाती। लेकिन कितना अनुशासन! रंगबिरगे लिबास, ख़ूबसूरत चेहरे, ऊँची एडीवाले बूटो की, मनोहर सुडौल पैरो की पागल कर देने वाली चट्चट् आवाज़! चारो तरफ इत्र की, पाउडर की खुशबू! धूप निकलती तो तमाम ख़ूबसूरती पर ज्वार आ जाता। दो ही सप्ताह हुए है। वह मेरा अत्यन्त प्रिय दृश्य। उस में मै हर रोज जीता।

और पैरिस? वह जुलाई की १४वी तारीख थी। फ्रेंच राज्यक्रान्ति की १५०वी वर्षगाँठ। बॅस्टिल के विध्वस की १५०वी वर्षगाँठ। किसी भी फ्रेंच आदमी से १४ जुलाई की बात कीजिए। नृत्य का सगीत शुरू होता है, और युरॅप में रहने वालो के शरीर आप से आप नाचने-थिरकने लगते है। १४ जुलाई शब्द का जादू इसी सगीत जैसा है। प्रत्येक रास्ते मे, गली मे, दूकान मे, कॅफे मे—हर कही पैरिस दिन-भर नाचता रहा। फ्रेंच मदिरा की बाढ हँसी-खुशी का, प्रेम का अनुपम ज्वार, सुन्दर इमारतें, सुन्दर युवतियाँ, सुन्दर वस्त्र, सुन्दर मार्ग, सुन्दर दृश्य— सब कुछ बहुत चित्ताकर्षक, पागल कर देने वाला। दो सप्ताह मुश्किल से हुए थे। उसी तरह नेपल्स, उसी तरह जिनोवा। युरॅप-भर मे दिखाई देने वाली मानवीय व्यवहारो की वह अतुलनीय भव्यता मेरी आँखो मे तैर गयी।

सभी शहर देखे हैं। लेकिन र्बलिन मै नही देख सका। फिर भी वही नाम बार-बार आँखो के सामने आता है। हॅर्टा र्बलिन की रहने वाली थी। सामने दिखाई देने वाले बम्बई को आँखो से ओझल कर देता हूँ। सिर तकिये पर रखता हूँ। यह असीम वेदना, यह बेकली कब कम होगी?

यह इतना दु ख किस बात का है? हॅर्टा की प्रीति का? उस के वियोग का? हो सकता है। लेकिन मेरा मन इतना दुर्बल नही। वियोग के, चिर-वियोग के आघात मै ने सहे है—इस से भी अधिक तीव्र। दोस्ती की गरमाहट सुलगती हुई मै ने देखी है। वैसे ही उसे बुझ कर उदासीनता की राख मे परिणत होते भी देखा है। कहते है कि प्यार का घाव शेरनी के बदन के घाव-जैसा ही होता है। बार-बार उस का मुँह खुल जाया करता है। लेकिन मेरे शरीर पर भी ऐसे ही घाव है और फिर भी मै भला चगा हूँ। किन्तु यह ताजा दु ख अनन्त लगता है।

कभी उस से मुक्त हो पाऊँगा ? हॅर्टा ने आत्महत्या की—हाँ ! क्या मै ने आप से कहा ? आज सुबह के 'टाइम्स' मे मैं ने पढा। कोने मे कही हागकाग का तार है—जिस जहाज से मैं आया उस जहाज़ की एक मुसाफिर फ्राऊलाइन हॅर्टा व्हॅन ने समुद्र मे कूद कर आत्महत्या कर ली। कारण संवाददाता नही जानता। कभी सोचता हूँ, वह कारण मै जानता हूँ। फिर सोचता हूँ, नही, मै नही जानता।

दो दिन से बम्बई मे हूँ। अभी तक बाहर नही निकला। किसी से नही मिला। कमरे मे सामान वैसा ही पडा है। शरीर पर वही कपडे हैं। उन्ही कपडो मे सोता हूँ। आज सुबह बाहर जाने वाला था। अब नही चाहता। सामने ही 'टाइम्स' है। एक हागकाग की आत्महत्या की खबर। दूसरी बर्लिन के हेर नॉवॉर नामक व्यक्ति की। उसे तीन साल की सज़ा दी गयी है। तीसरी बर्लिन के ही कार्ल फ्राज नामक जर्मन युवक की। शहर के बाहर किसी जगल मे उस की लाश पायी गयी। ये नाम मै जानता हूँ। फ्राज़ हॅर्टा का प्रेमी था। नॉवॉर एक जर्मन कम्पनी का मैनेजर था। उसी कम्पनी मे हॅर्टा असिस्टेण्ट मैनेजर थी, और—

लेकिन सब कुछ एक साथ याद हो आता है। ग्यारह दिन, अनेक व्यक्तियो का जीवन, उन के इतिहास, भविष्य, और आज हॅर्टा की आत्महत्या। वेदना की, क्रोध की ज्वालाएँ भडक उठती है। मस्तिष्क अचेतन-सा हो जाता है। दु:ख के इन आघातो से शक्ति नष्ट हो जाती है। खून खौल उठता है तब सोचता हूँ—उठूँ, विद्रोह कर दूँ ! पर मै अकेला ! एक पेड के हिलने से कभी आँधियाँ चलती है ?

इस दु:ख का बोझ कुछ हलका करने के लिए लिखने का यत्न कर रहा हूँ। लेकिन कैसे लिखूँ ? आदि कहाँ ? अन्त कहाँ ? लगता है कि क्रम से जो अन्त मे कहना चाहिए वह पहले ही कह रहा हूँ। कुछ समय के लिए मेरी दुनिया ही उलटी हो गयी है। आरम्भ, अन्त, दिशाओ का अनुक्रम, सब-कुछ विपरीत हुआ-सा लगता है। सोचता हूँ जरा प्रकृतिस्थ हो कर यह सब कहूँ।

दो

अगस्त का महीना आया। आकाश गहरा नीला हो गया, जिस मे ताजी धूप का पीला तेज घुला हुआ था। फ़्रान्स की धरती पर चारो ओर उस मिश्रण से बनी शीतल हरियाली का हरापन फैला था। चक्रधर उस दृश्य मे खो गया।

पाँच बजे रोम एक्सप्रेस पेरिस से रवाना हुई। दूसरे दर्जे के एक डिब्बे मे खिड़की के पास चक्रधर बैठा था। पेरिस मे बितायी बेशुमार रगीनियो से भरी आठ रातें। उस के मन मे अभी तक बेहद चुनचुनाहट थी। उस ने परिचारक को बुला कर शॅम्पेन मँगवायी। आधे घण्टे मे ही उस का मन स्थिर हो गया। उस की निर्निमेष आँखें बाहर दिखाई देने वाले फ़्रान्स से विदा ले रही थी।

गाडी उपनगर से बाहर निकली। मकान छोटे होते-होते अन्त मे इक्के-दुक्के ही रह गये थे और थोडी ही देर मे उन की स्मृति भी मिट गयी। चरागाह, खेत और मोहक हरियाली का न टूटने वाला सिलसिला। इस सब के बीच बायीं तरफ एक नहर। उस के बाँध नजर आ रहे थे। कोई शौकीन मिजाज एक छोटी-सी नाव मे निश्चिन्त भाव से बैठा हुआ मछली पकड रहा था। सूरज की किरणें तटवर्ती वन मे छायाओ के साथ आँखमिचौली खेल रही थी। एक छोटी-सी पगडण्डी नहर के किनारे-किनारे चली गयी थी, जिस पर अवकाश के समय मे टहलते जोडे नज़र आ रहे थे।

सब-कुछ तसवीर-जैसा लग रहा था। यह बात कल्पना से परे थी कि इस पर भी कोई काली छाया होगी। पर एक छोटा-सा स्टेशन गया और उस के पीछे रेलवे लाइन से एकदम सटा हुआ अनगिनत क़ब्रो का एक सिलसिला शुरू हुआ।

चक्रधर ने सामने के मुसाफिर से पूछा, "क्या यह कब्रिस्तान बहुत पुराना

है ?" उस ने गर्दन हिला कर उत्तर दिया, "पुराना ? यह तो फ़्रान्स को पिछले युद्ध की देन है !"

मृत्यु की शीतलता से फैली हुई वह सफ़ेद बर्फ़ थी !

उस का विस्तार समाप्त नही होता था। सुन्दर बेलबूटेदार सफ़ेद पत्थर। पच्चीस बरस पहले मृत्यु को बडी शानदार दावत मिली थी, उसी की सजावट के अवशेष थे ये बेलबूटे ! चक्रधर का मन काँप उठा।

इतनी सुन्दर हरियाली का पल-भर में रणागण हो गया ! वैभव-विलास मे डूबे फ़्रान्स मे भी आगामी युद्ध की आहट सुनाई पड रही थी।

वह फ्रेंच नही जानता था। नतीजा यह कि पैरिस मे समाचार-पत्र पढना तक मुश्किल हो गया। अँगरेजी समाचारपत्रो के लिए उस ने विशेष प्रयत्न किया नही। देश-देश में नफरत के शोले धधक उठे थे और उसे ख़बर नही थी। लेकिन कही-न-कही एकाध ऐसी घटना घट ही जाती जिस से उसे अनुभव होता कि ये देश अभी-अभी कब्रिस्तान से उठे है, और फिर कब्रिस्तान मे गिरा चाहते है।

सब तरफ यही अहसास होता। लेकिन विलास के स्थानो मे भी वह हो, यह क्या अचरज की बात नही ?

पिछली रात की बात। एक बजे के करीब। रू द ब्लाँद् मे एक नायर के सामने चक्रधर मोटर से उतरा। फुटपाथ पर आ कर उस ने दरवाज़े में से अन्दर झाँक कर देखा। सौ-पचास जोडो का हुडदग चल रहा था। उत्तेजित मन को काबू में लाने के लिए उस ने सिगरेट की डिबिया निकाली। लाइटर सुलगाने की कोशिश की। लेकिन वह जल ही नही रहा था।

रात मे गरमाहट थी। सडक पर सन्नाटा। इतने में बिलकुल करीब से किसी ने पुकारा, 'मौश्ये !' उस ने मुड कर देखा। उस के पास एक औरत खडी थी। रात के पास औरतो की उम्र छिपाने का जादू होता है ! स्थूल शरीर, भूखी आँखें, रँगे होठ, चेहरे पर कृत्रिम लाली। इतना-भर वह देख सका। उस ने पूछा, "मौश्ये, आप कहाँ के रहने वाले है ?" चक्रधर ने उत्तर दिया, "मै इजिप्शियन हूँ !" उस ने हर्ष से कन्धे हिलाये और कहा, "इजिप्शियन यानी संसार का सब से पुराना मानव-वश और अभी तक जीवित ! हिन्दुस्तानी लोगों

की तरह नाम-शेष नही हुआ !"

चक्रधर को आश्चर्य हुआ। उस ने सिगरेट आगे बढायी; सिगरेट ले कर उस औरत ने आगे कहा, "मुझे प्यास लगी है, चलो, कही शराब पियें !"

अब उसे पूरा विश्वास हो गया। वह वेश्या थी। चक्रधर ने पूछा, "मेरे साथ चलोगी ?" उस ने हर्ष से कहा, "इजिप्त की जय हो !" चक्रधर ने कहा, "मेरे पास ज्यादा पैसे नही है।" उस ने हँस कर उत्तर दिया, "हमारी यूनियन की दर है। उस के हिसाब से ही मै पैसे लूँगी ! लेकिन आप चलिए तो सही ! पैसे का बाद मे देखा जायेगा।"

दोनो मोटर की तरफ मुडे। घूम कर जाते हुए मोटर की बत्तियो की रोशनी उस के चेहरे पर पडी। एकाएक दरवाजा खुल गया। चक्रधर का गाइड ड्राइवर नीचे उतरा। उस ने चक्रधर से कहा, "मौश्ये, यह क्या ? यह तो बुढिया है।"

औरत ने ड्राइवर को चिकोटी काट कर कहा, "ज़बान सम्भाल कर बात करो।" लेकिन ड्राइवर ने उसे झिडक दिया, "चल हट, बुढिया को साथ लेकर क्या कब्रिस्तान. जाना है ? साहब को खूबसूरत जवान लडकी की मुहब्बत चाहिए।"

वह ठहाका मार कर हँस पडी और बोली, "मरदुए, कल लडाई शुरू हो जायेगी ! दो महीनें के बाद शायद तुम इस दुनिया मे नही रहोगे ! इन दिनों कही मुहब्बत मिल सकती है ? प्यार तो शान्ति मे जीता है, लडाई के मैदान में नही।"

चक्रधर ने गौर से उस की तरफ देखा। कहा, "तुम अँगरेज़ी अच्छी बोलती हो !"

"मै अँगरेज हूँ, मौश्ये ! आप जानते है, कॅसॅनोवा क्या कहता है ? प्रीति के खेल में पंचेन्द्रियो की सहायता चाहिए !" कह कर हँसती हुई वह गाडी मे बैठ गयी और चक्रधर को अन्दर ले कर ड्राइवर से बोली, "चल रे, नटखट लडके !"

लॅटिन क्वार्टर के किसी होटल मे चक्रधर उसे ले गया। उस की बकबक ज़ारी थी। लेकिन चक्रधर ने चुपचाप कमरे का दरवाज़ा खोल दिया। बत्ती जला कर कुरसी उसँ के सामने खींच ली और आलमारी से शराब निकाल कर

दो गिलास भर दिये। एक गिलास उस के आगे रखते हुए उस ने पूछा, "तुम कब तक यहाँ ठहर सकोगी ?"

एक घूँट पी कर उस ने कहा, "वेश्या के लिए एक रात एक जिन्दगी होती है। यही समझिए कि यह ज़िन्दगी आप के कदमो पर न्यौछावर है।"

औरत ने शराब खत्म कर के गिलास नीचे रख दिया। सिर से हैट उतारा और चक्रधर की ओर पीठ फेर कर कहा, "आप ये बटन खोल देंगे ?"

चक्रधर ने उसे कुरसी पर बैठा दिया। सामने की खिडकी खोल दी। परदा सरका दिया। वही खडे रह कर उस ने उस से कहा, "मै सिर्फ तुम्हारे जीवन की क़हानी सुनना चाहता हूँ।"

उसे बहुत हँसी आयी। चक्रधर ने खीझ कर कहा, "हँसने की क्या बात है ?"

उस ने हँसी रोक कर उत्तर दिया, "आप अभी नौसिखुए दिखाई देते है। वेश्या के पास जाने की जब इच्छा होती है, तब आदमी अपने-आप को धोखा देने लगता है। मन को बात छिपा कर अपने-आप को समझाने लगता है कि हमे तो वेश्या की असली हालत-भर आँखो से देखनी है। हो सके तो क़िसी का उद्धार भी करना है।"

चक्रधर खीझता जा रहा है यह देख कर वह बोली, "नाराज़ न होइए ! आप ने 'सिर्फ' कहा इसी लिए मुझे हँसी आयी। लेकिन पैसे लिये बगैर मै नही जाऊँगी, हाँ !"

उस की नकली अदा से चक्रधर को घृणा हो आयी। अब उस का चेहरा उसे स्पष्ट दिखाई दिया। फूले हुए गालो के कारण आँखें छिपी हुई। ठुड्डी पर दो झुर्रियाँ थी। बेशुमार रँगे हुए होठ और बीच-बीच में बाहर निकलने वाली जीभ ! उसे याद हो आया कि ऐसे होठो को किसी ने बहते हुए जख्म के मुँह की उपमा दी है।

वह चिढा। पैण्ट की जेब से सौ फ्रैंक का एक नोट निकाल कर उस ने सामने के पलंग पर फेंक दिया और कहा, "जाओ, निकलो यहाँ से। लो अपनी यूनियन की दर। तुम्हारी बातो ने मुझे लुभाया इस लिए तुम्हे यहाँ ले आया था, तुम्हारे बुड्ढे रूप पर लट्टू हो कर नही !"

थोडी देर के बाद उस ने अपनी कहानी सुना दी ।

उस ने कहा, "मै अँगरेज़ हूँ । फ़ान्स की धरती पर वेश्या बन गयी । अब यही रहती हूँ, क्योकि इंग्लैण्ड मे कानून की तकलीफ है । वहाँ पेशा करने नही देते ।

"मै सोलह साल की थी । सन् चौदह मे युद्ध शुरू हुआ । फ़ान्स मे घमासान लडाई हुई । हज़ारो, लाखो की तादाद में सैनिक फ़ान्स आते । मारे जाते । लडाई मे हर हमले से पहले सैनिको को रम पिलाई जाती है । युद्धकाल में औरत का उपयोग भी मृत्यु से पहले क्षणिक मोक्ष का अनुभव करा देने वाले नशे का साधन मात्र होता है ।

"प्राण हथेली पर ले कर निकले हुए मर्द । सब जवान । अत्याचारों की सीमा न रही । शायद बेल्जियम मे जर्मनो ने भी औरतो पर इतने अत्याचार नही किये होगे, जितने फ़ान्स में स्वेच्छापूर्वक होने लगे । एक ही साल में फ़ान्स मे हज़ारो की तादाद मे अवैध सन्तानें बढ गयी । उन के बाप का कोई पता न था । चारो तरफ भडकी हुई आग । दिमाग पर पागलपन सवार । उस समय ऐसा न होना ही आश्चर्य की बात होती !

"आखिर अमीरो के महलो की दीवारें ढहने का वक्त आ पहुँचा । सरकार के होश उड गये । अँगरेज़ी उपनिवेशो और मित्र-राष्ट्रो के सैनिको की बाढ पर बाढ आ रही थी । सब तरफ फौजी कानून । कल मरने के लिए निकले हुए सैनिको को कौन-सी सज़ा डरा सकती थी ?

"मै इग्लैण्ड मे थी । घर मे कोई नही । होटल में वेटरका काम करती । मेरा प्रेमी लडाई पर चला गया था । मेरे जीवन का आधा सुख सिर्फ उस के खत थे ।

"जाने कैसे हम फ़ान्स आ पहुँचे ! समाचार फैलने लगे । फ़ान्स में सैनिकों के लिए जवान लडकियो का इन्तजाम किया जा रहा है । सच क्या था और झूठ क्या, भगवान् जाने ! हमारे होटल मे जितनी जवान लडकियाँ थी, वे सब उन मे थी । जहाज हम जैसी लडकियो से भरा हुआ था ।

"फ़ान्स आ पहुँचे । थोडे ही दिनो मे मै वेश्या बन गयी ।

"भीड होती है तो अन्दर जाने के लिए लोग क्यू बनाते हैं । बिलकुल वैसे

ही हमारे कमरे के बाहर कतारें खडी रहती। बडे-बडे दीवानखाने। बीच-बीच मे परदे। वे ही कमरो का काम देते थे। सैनिक एक दरवाजे से आते, शराब पिये हुए, नशे में धुत्त, क्या कर रहे हैं इस से भी बेखबर और दूसरे दरवाज़े से बाहर निकल जाते। बीस-पचीस आ कर चले जाते तो नयी लडकियाँ लायी जाती।

"अब कुछ नही होता। उस समय अजीब-अजीब विचार आते। कभी सोचती, हम इग्लैण्ड के लिए यह कर रही है! लडाई खत्म हो जाने के बाद हमारा देश हमे इस का पुरस्कार जरूर देगा। जवान लडके। उन के उत्साह की कोई सीमा न थी। हर तरफ मरने की तैयारी दिखाई देती। कई बार मन किसी की तरफ आकर्षित हो जाता। लेकिन किसी भी बात के लिए समय नही था।

"लडाई खत्म हुई। मै इग्लैण्ड लौटी। लेकिन अब मै वेश्या बन चुकी थी। समाज मे मेरे लिए कोई जगह नही थी। नौकरी मिलने की सम्भावना भी नही। अब तो बस एक ही पेशा मै कर सकती थी, वही शुरू किया।

"दो साल के बाद एक बार जब मैं गिरफ्तार हो गयी तो मुझे पता चला कि इंग्लैण्ड में वेश्या-वृत्ति कानूनन वर्जित है। खैर, थोडी-सी सजा भुगतने के बाद मै रिहा हो गयी। परिस्थितियो ने अब मुझे काफी चालाक बना दिया था। मै ने फिर से पेशा शुरू किया। फिर सजा हुई, फिर पेशा, यही सिलसिला बहुत दिन तक चलता रहा। जवान थी, इस लिए जैसे-तैसे पेट भर सकती थी। रूप-यौवन ढलने के बाद तो कौन पूछता है! लेकिन एक दिन वह आया कि दो जून रोटी पाना भी मुश्किल हो गया। लन्दन मे पेशा नही चलता था। सोचा कि दूर किसी छोटे-से गाँव में चली जाऊँ और लिवरपूल की तरफ चली गयी।

"कुछ ही दिन पहले एक मुकदमा चला था। आप ने पढा होगा। हथियारों के कारखानो के कुछ भेद किसी अँगरेज़ बेरोजगार ने तीस पौण्ड के बदले में जर्मन जासूसो को बेच डाले। वह स्कॉच था। पिछली लडाई मे जख्मी हो कर निकम्मा हो गया था। तब से अब तक बीस साल का यह समय उस ने नौकरी के बिना बुरी हालत मे बिताया। एक ज़माने में इग्लैण्ड के लिए जर्मनो के विरुद्ध लडने वाला वह जवान आखिर कमजोरी का शिकार हो गया और अँगरेज़ कारखानो के भेद उस ने जर्मनो को बेच डाले।"

"लेकिन मेरे डर का कारण कुछ और ही था। समाचार पत्रो में बडे-बड़े शीर्षक दे कर छापा गया कि एक स्कॉच ने देश के साथ विश्वासघात किया। लोग कहने लगे, स्कॉच घर के भेदी है। आज आइरिशो के प्रति इग्लैण्ड मे द्वेष का वातावरण है। यहूदियो के प्रति जर्मनी मे है। वही हालत आगे चल कर स्कॉच लोगो की होगी। मैं मूलत. स्कॉच हूँ। मेरे रास्ते में ये जर्मन जासूसी के जाल कई बार बिछाये गये थे। तरह-तरह के पाप कर चुकी थी। अब देश के साथ विश्वासघात का एक पाप और सर पर नही लेना चाहती थी। इसलिए पैरिस चली आयी। यहाँ आराम से पेट भर सकती हूँ। यहाँ कानून की तकलीफ नही।"

अँधेरा छा गया। खाने का समय होने को आया। 'खाना तेयार है' चिल्लाता और एक छोटी-सी घण्टी बजाता हुआ परिचारक कॉरिडॉर मे से चला गया। चक्रधर को जैसे अब होश आया। तभी उस के डिब्बे का दरवाज़ा खुला और एक हिन्दुस्तानी लडकी अन्दर आयी। लेकिन एकाएक चौक कर उस ने कहा, "माफ़ कीजिएगा। मै गलती से इस डिब्बे मे आ गयी।" और वह जाने के लिए मुडी।

चक्रधर उठा। कितनी काली दिखाई दी वह उसे! यही नही, उस ने अपने होठ भी रग रखे थे। उस कुरूपता ने उसे बचपन मे सुनी कहानी की बच्चे खाने वाली डायन की याद दिला दी। उस के पीछे ही लतीफ अन्दर आया और बोला, "उठो, उठो, खाना खाने चलते हो कि नही?"

चक्रधर ने उस की तरफ देख कर कहा, "इस काली लडकी तक का पीछा आप ने नही छोडा?" लतीफ हँस कर जवाब दिया, "देखो यार, मेरा पेशा दलाली का है। दलाली कोयले की भी करता हूँ और सोने की भी। चलो, खाना खाने चलो।"

दोनो खाने के डिब्बे की ओर चले गये।

अब्दुल लतीफ एक अजीब आदमी था। लन्दन में ईस्ट सेन्ट्रल की एक सड़क पर मेथा ऐण्ड कम्पनी की दलाली की दुकान है। चक्रधर ने लतीफ को

पहली बार वही देखा था। इग्लैण्ड छोडते समय वह मेथा से विदा लेने गया तो सँकरी गली मे स्थित चालनुमा इमारत मे सीढियाँ चढते हुए उसे खयाल आया—क्यो न मेथा को पेरिस तक साथ ले लिया जाये। उस ने आखिरी दरवाज़ा खोल कर अन्दर दाखिल होते हुए कहा, "मेथा, तुम ने वादा किया था कि एक बार तुम पेरिस चलोगे—"

मेथा का इशारा देख कर वह बीच में ही रुक गया। उसे बैठा कर मेथा नें एक व्यक्ति की तरफ इशारा करते हुए हलके स्वर में कहा, "ज़रा ठहरो। अँटवर्प से बात हो रही है। हम फिर बातें करेंगे।"

टेलीफोन पर लतीफ ही जल्दी-जल्दी फ्रेंच में बोल रहा था। उस की उम्र का अनुमान लगाना कठिन था। काली आँखें, असली इजिप्शियन चेहरा, कीमती सूट। उस का बोलना खत्म हो जाने के बाद मेथा ने चक्रधर का परिचय उस से करा दिया और कहा, "तुम्हें सफर मे कोई साथी ही चाहिए न! मै तो यहाँ से कही जा नही सकता। लेकिन ये पेरिस जाने वाले है। तुम चाहो तो जिनोवा तक भी साथ दे देंगे।"

लतीफ ने पूछा, "आप हिन्दुस्तान लौट रहे है?" मेथा ने हँस कर कहा, "जी हाँ, लडाई होने वाली है न! डर गया है!" चक्रधर ने उत्तर दिया, "तुम्हारा तो ठीक है, यार! गोरी बीवी है। घर-बार यही है। लडाई हो या न हो तुम्हें क्या!"

मेथा ने लतीफ की तरफ देखते हुए कहा, "जान किसे प्यारी नही! अगर इन्हो ने निश्चित रूप से बताया कि लडाई हो ही जायेगी तो मै भी अमरीका भाग जाऊँगा।"

"क्या ये जर्मनी के विदेश-मन्त्री बनने वाले हैं?"

मेथा ने शरारतभरी आवाज़ मे कहा, "उस से भी बडे। ये हथियारो के कारखाने का माल बेचने वाले दलाल हैं। युद्ध न होता हो तो करवाना इन के बस की बात है।"

लतीफ ने सिगरेट जलायी और धुआँ छोडते हुए कहा, "मेथा, तुम मज़ाक कर रहे हो न? लेकिन यह बात झूठ नही है। माल इकट्ठा हो जाये तो बाज़ार में लाना ही चाहिए। जो देश खरीदना चाहते है उन्हे बेचना चाहिए। और

फिर जब तोपें और गोला-बारूद बेचना है तो उस के लिए लडाई भी अवश्य होनी चाहिए। ज्यादा मुनाफा पाने के लिए लडाई चालू रहे यह भी जरूरी है। बिजनेस का यही सिद्धान्त है। बिजनेस न रहा तो देश की दौलत घट जायेगी, लोग भूखें मर जायेंगे।"

चक्रधर ने हँस कर कहा, "जी हाँ, और आप के कारखाने चलते रहे तो आखिर जिन्दा रहेगे सिर्फ दलाल और कारखानो के मालिक।"

इन सब बातो में सत्य का अंश हो या न हो, लोगो को पूरा विश्वास हो गया था कि हथियार बनाने वाले कारखानो के संचालक ही युद्ध करवाते है। अमरीका ने इसी लिए सब कारखानो के व्यवहारो की सरकारी जाँच-पडताल करवायी थी। ब्रिटेन मे एक रॉयल कमिशन भी इसी लिए नियुक्त किया गया था। कुछ लोगो का कहना है कि इन कारखानो पर सरकार का अधिकार होना चाहिए। लेकिन वैसा होने से भी क्या फर्क पडता है? मुनाफाखोरी सब तरफ फैल गयी है। युद्ध का सुअवसर आसानी से अमीर बनने के लिए बहुत ही अच्छा होता है। पिछले युद्ध मे यहूदियो ने जर्मनी मे जो-जो किया, उस मे से कुछ भी इंग्लैण्ड, फ्रान्स या अन्य मित्र राष्ट्रो के मुनाफाखोरो ने करने के लिए बाकी नही रखा था।

तीनो उठे। चाय पीने गये। मेथा ने चक्रधर से कहा, "मुझे धन्यवाद दो कि पेरिस जाने के लिए तुम्हे इतना अच्छा साथी दे रहा हूँ। इन की एक और दलाली के बारे मे भी बताये देता हूँ। लेकिन बिलकुल प्राइवेट है, हाँ! गोरी लडकिया दुनिया-भर मे बेचने का, कैबरे, थिएटरो, नाच-घरो, वेश्या-गृहो के लिए सप्लाई करने का एक व्यापार चलता है। उस का नाम है व्हॉइट स्लेव ट्रैफिक। दूर का कहो या करीब का, लेकिन उस के साथ इन का थोडा-सा सम्बन्ध है।"

खाना खत्म हुआ। कॉफी के प्याले आ गये। लतीफ ने चुरुट सुलगाते हुए कहा, "आई एम वैरी हैप्पी! बचपन मे गरीब था तब अमीर होने की बाजी लगायी थी। अब निश्चित है कि युद्ध जरूर होगा। एक युद्ध हुआ तो बेसिल झाराफ से भी अमीर बन कर दिखा दूँगा।"

चक्रधर ने कहा, "झाराफ का नाम मैं ने नही सुना। कौन है यह ?"

वह हँसा। चक्रधर ने पूछा, "आप हँसते क्यो है ?" उस की नजर थोडी अन्तर्मुखी हुई-सी दिखाई देने लगी। उस ने कहा, "हथियारो के कारखानो के व्यवहार सन्देहास्पद रहते हैं। उन की जाँच-पडताल करने के लिए इग्लैण्ड में रॉयल कमिशन नियुक्त किया गया था। युद्धोपयोगी सामग्री बनाने वाला ससार का सब से बडा कारखाना है व्हायकर्स। उस के प्रमुख डाइरेक्टर की गवाही थी। एक सदस्य ने पूछा, 'सर बेसिल झाराफ के साथ आप का क्या सम्बन्ध है ?' गवाह ने जवाब दिया, 'झाराफ का नाम मैं ने नही सुना। कौन है यह ?' मुझे उस की याद आ गयी।"

सर बेसिल झाराफ शस्त्र-सामग्री बेचने वाला ससार का सब से बडा दलाल था, जिस ने अपार सम्पत्ति प्राप्त की थी। कोई राष्ट्र ऐसा नही था जहाँ कि सरकार मे उस की पहुँच न हो। उस का आना-जाना शुरू होते ही भविष्यवाणी की जाती कि अब थोडे ही दिनो मे युद्ध शुरू होगा। और प्राय वह भविष्यवाणी सत्य निकलती। मचुकियो, चीन, ॲबिसीनिया—हर जगह लडाइयो की शुरूआत इस तरह के दलालो के आने-जाने से ही हुई थी।

चक्रधर ने चिढ कर कहा, "आई हैट दिस बिजनेस ऑफ वार!" लतीफ ने उत्तर दिया, "ओह! इट्स एँ लवली बिजनेस! आप को युद्ध से नफरत है ? पर युद्ध कहाँ नही है ? फिलहाल शान्ति है न ? तोपो की आवाजें सुनाई नही पडती, इस लिए आप समझते है कि सब ठीक चल रहा है ? माई डियर फैलो, आल इज वार अण्डर मास्क!"

सुबह ट्रेन मादान फ़्रॅण्टियर पहुँच गयी। फ़्रान्स की सरहद है यह। बातूनी हँसमुख फ़्रेंच लोग, उन के छोटे-छोटे खूबसूरत मकान, पॉप्लर पेडो की कतारें, सब के ये अन्तिम दर्शन। स्टेशन का पोर्टर हो, मास्टर हो या सिपाही, सब के बर्ताव मे सहजता, खुलापन। ऊँची आवाज़ मे बातचीत, बार-बार हिलने वाले कन्धे, बार-बार गूँज उठने वाले कहकहे, बातचीत के बीच पॉर्दा मौंश्ये, मेर्सी मादमॉयसेल जैसे सम्बोधनो मे व्यक्त होती फ़्रेंच भाषा की माधुरी—सब कुछ आध घण्टे में ही पीछे रह गया। गाडी ने इटली मे प्रवेश किया। इटली है सुन्दर,

लेकिन फ्रान्स की अपेक्षा गरीब। प्रकृति का वैभव अपार है पर इनसानो की बस्तियाँ पुरानी, काई चढी। स्टेशन पर गाडी खडी थी। इर्द-गिर्द आल्प्स की पर्वत-श्रेणियाँ। उन के शिखरो पर बर्फ। पीछे की ओर सुन्दर झरना बह रहा था। शानदार लेकिन पुराने टूटे-फूटे मकान। बौने लोग। सब तरफ बहार-ही-बहार। लेकिन स्थान-स्थान पर विज्ञापन के बोर्ड, जिन पर मुसोलिनी के हस्ताक्षर सहित उस के सन्देश लिखे हुए थे। लोग मिलते तो हाथ ऊपर उठाते और फासिस्ट सलाम देते।

फ्रान्स में भाषा उस की समझ मे नही आती थी। और यहाँ भी वही सवाल। लेकिन फ्रान्स मे उसे खुला-खुला-सा लगता। यहाँ जकडा हुआ-सा लगने लगा। सीमा के स्टेशन पर ही उसे इस बात का अनुभव हुआ। सुबह के पाँच-छह बजे होगे। चार घण्टे के बाद वह जिनोवा पहुँचने वाला था और छह घण्टे के अन्दर हिन्दुस्तान के जहाज़ पर। सामान पर जहाज़ के लेबल थे, लेकिन उस के सामान की कडी जाँच की गयी। अधिकारियो की भाषा उस की समझ मे नही आ रही थी। बर्ताव मे अशिष्टता या उद्दण्डता नही थी, लेकिन दृष्टि में सन्देह स्पष्ट झलक रहा था। उस के पास इटली के मित्र-राष्ट्रो का पासपोर्ट नही था। इंग्लैण्ड का था। सब जगह यही सन्देह। युद्ध की सम्भावना लोगो मे चर्चा का विषय बनी हुई थी। बाहर पेडो पर, मकानों पर, तार के खम्भो पर, खेतो मे मुसोलिनी के हस्ताक्षर के साथ उस के सन्देश लगे हुए। यहाँ-वहाँ खेत मे एकाध बूढा आदमी घास काटता दिखाई पडता। घास के छोटे-छोटे ढेर कतार मे रखे हुए नज़र आते। सिर्फ उस समय के लिए सन्देह का, असुरक्षा का वातावरण भूल जाता। अन्यथा सब जगह यही हालत।

सारा युरॅप गोरा है। सिर्फ इटालियन्स ही साँवले होगे। उन के बाल भी हमारे ही जैसे काले। आँखें भी वैसी ही। सिसिली की स्त्रियाँ तो बिलकुल हिन्दुस्तानी स्त्रियो की तरह दिखाई देती हैं। लेकिन फ्रान्स या इग्लैण्ड से ज्यादा बेचैनी उसे इटली मे महसूस हुई। धीरे-धीरे गाडी आल्प्स उतर गयी। समतल धरती आयी। जिनोवा आ पहुँचा।

वह जहाज़ पर पहुँचा तो दो बजे थे। लच का समय बीत गया था। तीन बजे जहाज छूटेगा। अब फिर बाहर जा कर कुछ खा-पी आने का समय नही

रह गया था। वह सीधा केबिन में चला गया। थका हुआ तो वह था ही, कपड़े उतार कर बिस्तरे पर निढाल-सा जा पडा और सो गया। नीद खुली तब जिनोवा पीछे छूट चुका था। जहाज़ जिनोवा की खाडी मे था। सागर मे अद्भुत शान्ति। वह भी स्थिर चित्त हो गया। उस ने मन-ही-मन कहा, अब दस दिन आराम। विचार नही। तूफान नही। जी भर कर खाना, घूमना, खेलना और हँसते-हँसते बम्बई उतरना।

■

तीन

चाय की घण्टी अभी-अभी बजी थी। मेरी नीद खुली। पेट खाली था। जल्दी-जल्दी उठा, नीचे उतरा, मुँह धोया, कंघी की, टाई लगायी, जैकेट पहनी और केबिन के बाहर निकल आया।

उमस बहुत ज्यादा थी। जलपान-गृह मे तो हद हो गयी। भाड, सिगरेट का धुआँ, और पखे बिलकुल नही। मै नीचे गया। खाने का हॉल खाली था। एक बडी टेबुल के चारो ओर कई हिन्दुस्तानी बैठे थे। कुछ लोगो की चाय करीब-करीब खत्म हो गयी थी। कुछ लोग चले आ रहे थे। मै ने कुरसी खीच ली। डिश मे रखा हाथ पोछने का पतला कागज बिछाया और बेटर से कहा, "चाय, दूध और चीनी।"

इतने मे किसी ने मेरे कन्धे को छुआ। मै ने मुड कर देखा। एक मराठा युवक। लगभग पचीस साल का रहा होगा। उस ने हँसते हुए हाथ आगे बढा कर अपना परिचय दिया, "मै शिन्दे। आप का शुभ नाम ?"

उस की तरफ देखते ही मुझे अच्छा लगा। कुछ लोगो का व्यक्तित्व ही ऐसा विश्वासोत्पादक होता है कि उन्हे देखते ही हठात् मन में मित्रता के भाव जगने लगते हैं। मै ने अपना परिचय दिया। दूसरी तरफ एक मुसलमान लडका था। उस से भी पहचान हो गयी। उस ने हाथ मिलाया और कहा, "मै मन्नान हूँ। आप की तारीफ ?" मै ने अपना नाम बताया। सुनते ही उस के माथे पर बल पड गये। वह बोला, "आई एम ऐफरेड, इट इज ए बिट डिफिकल्ट फॉर मी। हाऊ डू यू स्पेल इट ?"

शिन्दे चाय पी रहे थे। वे एकदम जोर से हँस पडे और बोले, "परेशान हो गया हूँ इस स्पैलिग से। आई होप यू आर नॉट ऍ जर्मन आलसो। अभी मैं डेक पर खडा था। बराबर मे एक जर्मन था। वह अँगरेजी सीखना चाहता है। जी-

जान से कोशिशें चल रही है उस की। उस के साथ बात करना भी एक मुसीबत है। शब्द मुँह से निकलते ही पूछता है—आँ ? क्या कहा ? इस की स्पैलिंग क्या है ? उस के माने क्या ?"

मै डबलरोटी काट रहा था। छुरी पर मक्खन ले कर उसे रोटी पर फैलाते हुए मैं ने कहा, "आई एम ग्लैड यू डोण्ट लाइक जर्मन्स। आई हैव ए ग्रज अगेन्स्ट देम टू। आज पासपोर्ट के वक्त भी इन जर्मनो के ही कारण मै अधमरा-सा हो गया।"

शिन्दे ने हँस कर कहा, "उन के पास खडे रहना भी एक मुसीबत है। जरा-सा मौका मिलते ही बकबक शुरू। जहाज चला तब मैं ने कहा—ब्यूटीफुल जिनोआ! फौरन उस ने पूछा—ब्यूटीफुल के माने क्या? अब सुन्दर के माने क्या बताऊँ, अपना सर? और फिर स्पैलिंग! आध घण्टे मे ही मै इतना परेशान हो गया कि मुझे उस से चिढ हो आयी। किसी खलासी ने एक लडकी की ओर देख कर थोडी-सी छेडखानी की तो मैं ने यो ही कह दिया, 'इम्प्यूडेण्ट ब्रूट,' तो फौरन उस का कागज़-पेन्सिल आगे! 'ब्रूट के माने क्या? क्या बताता उसे? कहिए?"

मै हँस कर बोला, "आप ने क्या बताया?"

कागज से मुँह पोछते हुए शिन्दे ने कहा, "मुझे कुछ सूझता नही था और वह पीछा नही छोड रहा था। आखिर खीझ कर मै ने कहा, 'ब्रूट के माने इटालियन!' लेकिन वह फिर पूछने लगा, 'क्या, इटाइियन?' मै ने कहा, 'जी हाँ, और जर्मन भी!' "

सब जोर से हँस पडे। छुरियो, चम्मचो की आवाजें धीरे-धीरे कम होती जा रही थी। चाय खत्म कर के हम लोग उठे। मै अभी तक जर्मनो के बारे मे ही सोच रहा था।

जलपानगृह की चहलपहल। नये लोगो से परिचय। हर टेबुल के पास झुण्ड के झुण्ड हिन्दू-मुसलमान, काले-गोरे, मिल-जुल कर बैठे हुए। हाथ मिलाना, हँसी-मज़ाक, बातचीत और बहसो का बाजार गरम था। कही बीयर के गिलास,

कही शतरंज, ड्राफ्ट्स या ताश। जहाज़ पर ग्यारह दिन का निवास। कल्पना में वह सदा सुन्दर लगता है। पर सुन्दरता का एक बडा अभिशाप है। अकसर उस से जी ऊब जाता है। सिर्फ उस स्थिति से बचने के लिए ही सब की कोशिश।

मै काउण्टर के पास गया। स्टुअर्ड से सिगरेट माँगी। डिब्बा लिया और पैसे के बदले रसीद पर हस्ताक्षर कर दिये। फिर भीड मे से होता हुआ मैं कोने मे पडी एक टेबुल की तरफ बढा। उधर हवा आ रही थी, इस लिए वही बैठ गया और सिगरेट जला कर चारो तरफ देखा।

सौ सवा-सौ मुसाफिर होगे। आधे काले और आधे गोरे। कपडे सब के एक ही तरह के। बूट, पैण्ट, शर्ट, टाई। मेरी आँखें हिन्दुस्तानियो को पहचान सकती थी। यह बगाली, यह पजाबी, यह मद्रासी। लेकिन गोरे चमडे में फर्क नज़र नही आता था। कुछ जवान लडकियाँ, कुछ अधेड उम्र की और दो-एक बूढी औरतें। पुरुष थे, वे भी वैसे ही। लेकिन उन की जाति, उन का देश, पहचान मे नही आते थे। सामने ही एक लडकी सिगरेट पी रही थी। बडी-बडी आँखें, ज़रा-से फूले गाल, गोरा रग, चौडा माथा, लहराते बाल। आँखो मे लालसा थी—जीभ निकाल कर दौडती हुई शेरनी के जैसी। मन-ही-मन मैं ने कहा, यह शायद पोल होगी, अँगरेज हरगिज नही। बाद मे पता चला कि उस का नाम मार्था था।

पास बैठे एक युवक ने कहा, "माफ कीजिए, मै ऐशट्रे ले सकता हूँ ?" मै ने ऐशट्रे उस की तरफ सरका दिया, लेकिन मेरी नजर उस लड़की की तरफ थी। युवक ने हँस कर कहा, "शी इज़ एँ पीच! —इजन्ट शी ?" मै शर्मिन्दा नही हुआ। मुसाफिरो के लिए शर्मिन्दा होने योग्य कुछ नही होता। मै जानता था। इंग्लैण्ड जाते ही एक अजीब तरह का अनुभव होता है। रिश्तो-नातो का, जान-पहचान का, सामाजिक नियमो का दबाव नष्ट हो जाता है। जिन वासनाओ-लालसाओ का उल्लेख हम अन्तरग मित्रो के सामने भी नही कर पाते, उन्ही का प्रदर्शन सहज भाव से अपरिचितो के सामने करने लगते है। जीने की गति प्रचण्ड, उपभोग के अवसर अपरिमित और समय बहुत कम। झूठी शिष्टता का बोझ वहाँ सहा नही जाता। सिगरेट-केस खोल कर मुझे एक सिगरेट देते हुए वह

बोला, "कहिए, क्या राय है ?"

मै ने सिगरेट जलायी। उस के प्रश्न का आशय मै समझ गया। उस लडकी का शिकार करने के बारे मे वह मेरी राय जानना चाहता था। मै ने कहा, "राय काहे की ? बढते जाइए। आखिर मामला है तो दस ही दिन का न !"

दस दिन का सफर। सुख-साधनो की विपुलता थी। खाना, पीना, नाचना। कमी सिर्फ एक चीज की थी—औरत की। वह मिल जाये तो फिर यात्रा पूर्ण सफल। सब का यही दृष्टिकोण था। वह जोर से हँसा और बोला, "भाई, आप तो वाकई शौकीन है। कह सकता हूँ यह पजाब की जवानी है।" मै हँसा, लेकिन मै ने नही बताया कि मै पंजाबी नही हूँ। उस के बाद कुछ बातें हुईं। वह सिन्धी था। नाम था मदनानी। उस ने पूछा कि लडकियो मे से कोई मुझे पसन्द आयी है या नही। मै ने कहा कि अब मै थक गया हूँ। दो साल युरॅप मे था। लौटते समय पन्द्रह दिन पेरिस मे। फिलहाल मेरा शौक तो पूरा हो गया है। उस ने जोर से गरदन हिला कर कहा, "भई, ये हो नही सकता। आप माहिर है, हमारा साथ देना होगा। बस इन्ही मे से एकाध को पसन्द कर लीजिए। उस के पीछे पडेंगे।"

मै ने चारो तरफ नज़र दौडायी। हर कोई व्यस्त था। कुल मिला कर दस-बारह लडकियाँ वहाँ होगी। कुछ मुसकराती-हँसती हुई पास बैठे पुरुषों से बातें कर रही थी। एक पखा झल रही थी। लाउड-स्पीकर से संगीत की लहरियाँ निकल रही थी। दो-तीन लडकियाँ अपने-अपने स्थान पर ताल दे रही थी, झूम रही थी। उन की बलखाती कमर, लचकती गरदन, बार-बार बाल पीछे हटाने की चेष्टा सब कुछ देखा। लेकिन किसी भी लडकी की तरफ मन आकर्षित नही हुआ। मै ने अपने दोस्त से पूछा, "आखिर ये है कौन ?" वह बोला, "ओह ! दे आर ऑल जर्मन्स। बट दैट इज नाइदर हीयर नॉर देयर !"

मै ने उस से कहा, "एक्स क्यूज मी। आई हैव ए ग्रज अगेन्स्ट जर्मन्स। आई डोण्ट फॉल फॉर एनी आफ दीज़ गर्ल्स।"

उस के बाद आधे ही घण्टे के अन्दर एक जर्मन से मेरी दोस्ती हो गयी। मै जलपान-गृह मे बैठा था। मुझे ढूँढते हुए शिन्दे आ पहुँचे। मै ने सिगरेट पेश की। धन्यवाद के साथ उन्हो ने कहा, "माफ कीजिए। मै नही पीता।" मेरे पास

सुपारी थी। उन्हो ने वह भी नही ली। मुझे आश्चर्य हुआ। मै ने जान-बूझ कर कहा, "ऊब गया हूँ। चलिए, थोड़ी-सी ह्विस्की पियेंगे।" वे हँसते हुए बोले, "बीमार होने पर ही शराब पीता हूँ।" मेरे आश्चर्य की सीमा न रही। मैं नें आश्चर्य छिपाने की कोशिश की और कहा, "तो युरॅप की लडकियों के अलावा आप को और किसी बात मे रस नही है ?" इस पर ज़ोर से हँस कर वे बोले, "विध्वस, मै डॉक्टर हूँ। साधारण हिन्दुस्तानी मन को गोरी चमडी का जो आकर्षण होता है वह मुझे अब बिलकुल नही।"

आदमी झूठ नही बोल रहा था। झूठ बोलने की ज़रूरत भी नही थी वहाँ। महाराष्ट्रीय लडको की यह बात मै इंग्लैण्ड मे कई बार देख चुका हूँ। जाने क्यो, उन से अनाचार बहुत कम होता है। मेरे जैसा शायद एकाध ही होगा। मेरे पास पैसा था, रसिकता थी। रसिकता का अन्त स्त्री-पूजा मे होता है। मेरी रसिकता की चरम सीमा भी यही थी। और मै इंग्लैण्ड गया भी ऐसी मानसिक स्थिति मे—लेकिन जाने दीजिए वह सब।

शिन्दे खुश थे। मै ने कहा, "आश्चर्य है! आप को कोई व्यसन नही ? सद्गुणो का गला घोंट देने वाला यहाँ का यह वातावरण! और वह भी आप को पागल नही बना सकता ? ऊपर से तुर्रा यह कि आप खुश हैं। आई ऐन्वी यू!"

टेबुल पर हाथ रख कर वे झुक गये। बोले, "विध्वस, आई हैव मेड एँ फ़्रैण्ड। आई एम वैरी हैप्पी। आप से मिला दूँ ? आइए!" मै ने पूछा, "पर है कौन ?" "जर्मन।" शिन्दे बोले। मै ने जान-बूझ कर भौहें चढायी और कहा, "लेकिन शिन्दे, आप की और हमारी दोस्ती में एक ही बात समान थी—जर्मनो से नफरत, और आज····"

उन्हो ने मेरा हाथ पकड कर खीचते हुए कहा, "उसे तो अँगरेजी सीखने से नफरत है। जर्मन के सिवा कुछ नही चाहिए उसे। देखिए तो—" उन का हाथ पकड कर मै स्मोकिंग-रूम से बाहर निकला।

वाहर लिखने के टेबुलो पर दो लडकियाँ पत्र लिख रही थी। दो-एक दीवारों

से सटी आरामकुरसियो पर झपकी ले रही थी। दूसरी तरफ सीढियो पर मुसाफिरों का नीचे-ऊपर आना-जाना जारी था। बायी तरफ एक बडी खिडकी थी। खिडकी नही, दरवाजा ही समझिए। लोहे के मजबूत किवाड। उन्हे खोल कर दीवार से अटका दिया गया था। बाहर भूमध्यसागर। जहाज़ चलता तो पानी उछलता। उस का सुन्दर झाग भी। फुहार शरीर को रोमाचित करती। दरवाजे में आडे सीखचो का रेलिंग था। पास एक युवती बैठी थी। कृश गात। मलिन कपडे। बाल बिखरे हुए। कपडो से गरीबी स्पष्ट झाँक रही थी। रेलिंग पर एक बच्चा चढ रहा था; उसे रोकने को नीचे खीचते हुए वह परेशान-सी दिखाई दे रही थी।

शिन्दे ने पुकारा, "लुई", लेकिन उस बालक ने मुड कर नही देखा। लहरें उछलती, नीचे जाती, छोटी-छोटी पहाडियाँ-सी बन जाती, बाद मे गड्ढे। लगातार देखते रहने से लगता, हम झूले पर बैठे हैं, और आखिर टूट जाती तो लगता नीले घोडे के मुँह से झाग निकल रहा है। उस झूले पर लुई खो गया था। उस की माँ ने शिन्दे की तरफ देखा। मुसकरा कर स्वागत किया और लुई को खीचते हुए बोली, "लुई ! लुई ! अकल !"

लेकिन लुई को शिन्दे चाचा की परवाह नही थी। फिर भी अंकल शब्द के कारण वह मुडा। अपने प्यारे चेहरे पर अधिक से अधिक अप्रसन्नता का भाव दर्शाते हुए बोला, "Nien, Nien, no uncle ! Deutsch !"

शिन्दे ने मेरी तरफ मुड कर कहा, "देखा, उसे अँगरेज़ी अकल नही चाहिए। डाईश (जर्मन) शब्द चाहिए 'चाचा' के लिए।" बाद मे उन्होने उसे गोद मे ले लिया।

लुई के मन मे शिन्दे के लिए सहानुभूति पैदा हुई होगी। उस ने शिन्दे को दो चपतें मार दी। फिर गाल काटा और जर्मन मे बोला, "चाचा, चाचा !"

उस के बाद एक घण्टे तक मै, शिन्दे और लुई खूब खेलते रहे। उस की भाषा हम नही समझ पाते थे और हमारी वह नही। उसे अँगरेजी से नफरत, तो हमें डाईश से परहेज़। हाथ के इशारे, आँखो के इशारे, प्रत्यक्ष वस्तु-पाठ जाने क्या-क्या किया ! अर्थ समझ में आया तो मजा आ जाता। नही आया तो और भी मज़ा। विभिन्न देशो के हम यात्री। पर हमारा स्नेह कितना निःस्वार्थ

था। अन्य यात्रियो की तरह हमारी मित्रता मे, बात-चीत में, खेलने मे, हँसने मे, अवांछित अनुभवो की चर्चा नही थी, मन मे कोई पूर्वाग्रह नही थे; बौद्धिक बहस की हठ नही थी, थकान नही थी। डेक का सफेद रेलिंग, कुरसी पर बैठ कर कौतूहल से देखते यात्री, उस की उछल-कूद पर केन्द्रित स्त्रियो की वत्सल दृष्टि, पानी की गर्जन, झाग और फुहार और उन मे से उभर कर गूँजने वाला लुई का सीटी-सा मधुर, जरा कर्कश लेकिन बहुत ही उन्मुक्त हास्य! याद आती है तो मन टीस उठता है। पल-भर को भ्रम होता है कि मनुष्य के लिए स्मृति अभिशाप है या वरदान!

शाम तक हम दोनो उस के पीछे पागल हो गये। वह भी दूर नही जाता था। खाने का वक्त होने को आया। मुझे कपड़े पहनने थे। लुई को गोद मे लिये डेक मे नीचे उतरा। रास्ते में जो भी मिला उसी ने हम से बात की। अन्यथा, परिचय के बिना न बोलने वाली स्त्रियाँ इधर-उधर न देखते हुए नाक की सीध मे चली जाती। दो-एक ऐंग्लो-इण्डियन औरतें भी थी। उन्हें तो हिन्दुस्तानी कालापन काँटे-जैसा चुभता। लेकिन उन मे से भी एक मुसकरायी। मार्था आयी तो उस ने रास्ते मे हम दोनो को रोक लिया। लुई को गोद मे लेने की कोशिश की, चिकोटियाँ काटी, गुदगुदाया, खीच कर भी देखा। पर लालसा से अछूता उस का मन! मधुरता और सुन्दरता मे वह मार्था मे कही अधिक बढा-चढा था। उस ने मार्था का निषेध किया। मेरे गले से लिपटे हुए उस के हाथ शिथिल नही हुए। और वह लडकी भी उसे छोडती नही थी। आखिर शिन्दे ने उसे अपनी गोद मे लिया, और मै उस के ऊधम से ढीली पडी टाई की गाँठ ठीक करने लगा। इतने मे किसी ने पीछे मे मेरे कन्धे पर हाथ रखा। मुड कर देखा तो उस लडकी का पीछा करने वाला मदनानी था। मेरा हाथ दबाते हुए वह बोला, "दैट इज दॅ स्टफ। यू कैच दॅ चाइल्ड, दॅ चाइल्ड कैचेज़ दॅ लव-लीज़ फॉर यू!"

मुझे जाने कैसा लगा। लेकिन मै कुछ नही बोला और नीचे चला गया। शिन्दे लुई की माँ से बातें कर रहे थे। बेचारी खुश थी। मै ने मुड कर देखा। पास मुख्य स्टुअर्ड खडा था। उस ने गले की बो ठीक कर के थोड़ा-सा मुँह खोला और आँखें मिचकायी। मै ने उस की ओर देख कर पूछा, "यस, स्टुअर्ड?"

वह आगे बढा । शिन्दे लुई से बातें कर रहे थे । लुई को गुदगुदा कर वह धीमी आवाज़ मे उन से कहता है, "गुड ब्वॉय, बैटर मम्मी, क्लैवर फैलोज़ यू टू ।"

शिन्दे गुस्से से लाल हो गये । उन्होने दाये हाथ की मुट्ठी बाँध कर ऊपर उठायी और हलकी आवाज मे उस से कहा, "मी दिस ? डोण्ट रिपीट इट अगेन— नॉट टु मी !"

लुई की माँ हँस रही थी । शायद अर्थ उस की समझ मे नही आया होगा !

जहाज़ धीरे-धीरे चल रहा था । जिनोआ की खाडी । यहाँ समुद्र मे प्राय: तूफान रहता है । लेकिन आज सब तरफ खामोशी थी । न हिलना, न डोलना । सभी यात्री खुश थे । दिल बहलाने के लिए जहाज पर विविध कार्यक्रम होते है । लेकिन आज पहला ही दिन था । अभी वे शुरू नही हुए थे ।

बार मे पास ही चार आदमी ब्रिज खेल रहे थे, मेरा ध्यान उधर गया । दो-एक बगल मे बैठे उस खेल को देख रहे थे । उन मे एक युवा लडकी थी । ऊन जैसे बाल, पीछे रिबन मे बँधे हुए । रंग गोरा । [illegible] । बहुत नही तो नहीं, लेकिन चमकीली गहरी नीली आँखें । [illegible] विशेषता थी । बन्द होते तो सिर्फ एक ही महीन रेखा दिखाई देती । अलग होते ही उन का सुघड बाँकपन साफ नजर आता । आगे के दाँतो मे दो सोने के थे । वे चमकते ।

इतना वर्णन मै कर रहा हूँ, लेकिन मुझे विश्वास नही कि आप की आँखो के सामने कल्पना मे वह हू-ब-हू खडी हो गयी होगी । मेरी आँखो के सामने उस का वह सारा रूप जैसा का तैसा आज भी है । फिर भी इतना याद है कि जब पहली बार मै ने उसे देखा तब उस के चेहरे की विशेषताएँ मन पर ठीक तरह से अकित नही हुई थी । कभी-कभी उस का चेहरा उदास, बहुत ही खिन्न लगता । दृष्टि मे बुद्धि की चमक दिखाई देती । मै ने उस की तरफ देखा । उसी समय उस की नजर भी मेरी तरफ थी । फिर भी जब नजरें मिली तब वह झिझकी नही, बल्कि उस की आँखो मे आश्चर्य का भाव झलक उठा । वह देखती रही । आखिर मै ने

नज़र दूसरी तरफ फेर ली । पाइप पी रहा था । उस के बुझने का बहाना कर के माचिस खोजने लगा ।

फिर ऊपर देखा । अनजाने नजर फिर उस की तरफ ही गयी । आश्चर्य था कि वह फिर मेरी ओर ही देख रही थी । इतने मे मन्नान उस के पास आया । उस ने उस के कन्धे पर हाथ रखा और झुक कर उस के कानो मे कुछ कहा । साफ था कि उस के साथ दोस्ती करने में मन्नान सफल हुआ था । लेकिन उस के साथ बोलते हुए भी वह मेरी ही तरफ देख रही थी । धीरे-धीरे मेरा संकोच भी कम हो गया था । उस की ढिठाई-भरी चुनौती को स्वीकार कर मै उस की तरफ एकटक देखता रहा ।

यह कहना कठिन है कि यो देखने का अर्थ क्या था । आगे चल कर हमारी दोस्ती हो गयी, तो मै ने हेंटी से पूछा, लेकिन वह भी उस प्रकार देखने का अर्थ न बता पायी । उस नजर मे चोरी का भाव नही था । सम्भ्रम नही था । कोई भी संकेत नही था । मानो उसे होश ही नही था । पहले मात्र विस्मय, कौतूहल रहा होगा । बाद मे एक प्रकार का सिर्फ देखने का लालच । आश्चर्य यह कि चेहरे पर अन्य कोई भाव नहीं था । होंठों पर मुस्कराहट की छाया भी नहीं थी । न नाक सिकुड़ी थी, न माथे पर शिकन आयी थी । हेंटी के कथन से लगता था कि वह उस का पहला प्रेम-बोध था । लेकिन अपनी बात कहूँ? उस दृष्टि से मैं चकित हुआ था, कुछ आकर्षित भी । इस से बढ़ कर कोई भावना मेरे मन में नहीं आयी । एक ही बात अजीब लगती है । बहुत देर तक उस की तरफ देख कर भी उस के पास जाने का, बात करने का साहस मुझे नही हुआ । मै बिलकुल समझ नही पाया कि उस नजर मे स्वागत और निमन्त्रण था या निषेध और घृणा थी । चेहरे के कोरेपन के कारण किसी निर्णय पर पहुँचना मेरे लिए मुश्किल हो गया । वास्तव मे इस तरह के खेल मे मै कुशल हो गया था । दो साल पहले मेरे प्रथम प्रेम के टुकडे-टुकडे हो गये । एक लडकी से मुझे प्यार हुआ । वह भी मुझे चाहती थी । निष्ठा की सौगन्ध खायी गयी, वचन दिये गये । बाद मे नौकरी के लिए साल भर वह बंगाल मे रही । वही उस के पिता जी का स्वर्गवास हुआ । वह एकाकी हो गयी । हमारे पत्र आते-जाते । कम से कम मुझे तो याद है । मैं मन की गहराइयो से, जी तोड कर अपनी भावनाओं को व्यक्त करता, पत्रो मे

उस की मिन्नतें करता। उस ने भी अपने पत्रों मे मेरे बारे मे कभी असन्तोष प्रकट नही किया। मेरे पास पैसा था, चाहने वाले दोस्त थे। सुख के सभी साधन थे, सम्भावनाएँ थी। ऐसी स्थिति मे उस का एक पत्र आया जिस का अर्थ मै समझ नही पा रहा था। "मेरा प्रेम झूठा नही था और न अभी है। लेकिन एकाकी जीवन असह्य होता है। मुझे एक दूसरे लडके से प्रेम हो गया है। पिछले कुछ महीनो मे मै ने बहुत मानसिक पीडा सही। देखते, तो तुम क्षमा कर देते। मै उस के साथ ब्याह कर रही हूँ।" यह था उस पत्र का आशय।

उमा को दगाबाज या मतलबी कहना मुश्किल था। उस के पति के पास मुझ से कम पैसा था। शिक्षा मे भी कोई विशेष अन्तर नही था। उस पत्र से मुझे आघात पहुँचा। पहले-पहल उस लडकी से नफरत न करना असम्भव हुआ। उस से ही नही, प्रीति के अनुभवो से ही! मीठी-मीठी मुलाकातें, लुभाने वाली बातें, पागल कर देने वाली नजरें—सब से नफरत हो गयी। कोई भी जवान लडकी दिखाई देती, उस के व्यवहार मे आकर्षण दिखाई देता तो लगता, यह नखरा है, नाटक है, सरासर धोखा है; शिकार की तयारी है। स्त्रियो की मुलायम आवाज उन की नजाकत, लुभावनी भावभगी, सब कुछ मुझे ढोंग लगता। जीना मुश्किल हो गया। आखिर उठा और सीधा लन्दन चला गया। दो साल मुझे अनुभवी और कुशल बनाने के लिए काफी थे। पैसा था, शौक था और कटु अनुभवो का जहर मन मे था। चाहे जितना उपभोग करो पर मन से निर्लिप्त रहो। यह भी सीखा। अब मुझे कोई बात अनोखी नही लगती, किसी बात मे रुचि भी नही। मन से हँस नही सकता, रो भी नही सकता।' मानो भावनाओ की झील युरप की ठण्ड से जम गयी है, बर्फ बन गयी है।

हॅर्टा देख रही थी। मै भी एकटक देख रहा था। लेकिन, मन निर्णय नही कर पा रहा था। उठने की, बात करने की हिम्मत नही हो रही थी।

ब्रिज का खेल समाप्त हुआ। तभी मश्वान फिर हॅर्टा के पास आया। उस ने उसे सुझाव दिया कि डेक पर चलें। लेकिन हॅर्टा ने इनकार कर दिया। टेबुल पर खेल के बारे में बहस चल रही थी। मेरे पास ही माइकेल बैठा था। वह खेल के नम्बर लिख रहा था। उस ने पूछा, "जैण्टिलमैन, ओनर्स?"

सामने सहाय थे। वे बोले, "जाने दो, भाई! पाँच-सात नम्बर क्या लिखते

हां ?" माइकेल ने गरदन हिला कर कहा, "पाँच-सात करते-करते ही सौ हो जाते है और सौ नम्बर यानी तीन पेनी। मस्ट पुट डाउन ओनर्स।" मै ने जोर से कहा, "आह, माइकेल ! यू आर वर्स दैन एँ ज्यू !"

सब जोर से हँस पडे, लेकिन मेरा ध्यान उधर नही था। हर्टा एकाएक उठी और मन्नान का हाथ पकड कर डेक की तरफ चल पडी। जाते समय दरवाज़े के पास वह क्षण-भर के लिए ठिठकी और मेरी तरफ एक नजर देख कर बाहर निकल गयी।

उस नजर का मतलब समझना मुश्किल नही था। निराशा, वेदना और क्रोध ! एकाएक मन मे विचार आया—यह लडकी कही यहूदी तो नही है ?

एक जर्मन सीधा मेरे टेबुल की ओर आ रहा था। मै डरा कि कही यह मेरे पास ही न आ जाये। इस लिए एक किताब खोल कर मै ने पढना शुरू कर दिया। लेकिन फिर भी वह आ ही गया और मेरी टेबुल के पास बैठ कर जबर्दस्ती बात-चीत शुरू करने के लिए बोला, "गुडनाइट, सर !"

मै ने ऊपर देखा। सर पर छोटी-सी चाँद, स्थूल, सुख मे पला शरीर, मासल चेहरा। कपडे सादे थे। हाफ पैण्ट और आधी बाँहों की कमीज। मेरी ओर देख कर उस ने सिर थोडा-सा झुका दिया और फिर बोला, "गुडनाइट सर ! नाइस नाइट !"

उस की दृष्टि मे स्नेह था, और थी आशा। उसे निराश करना सम्भव नही था। उस के 'गुडनाइट' से मुझे थोडी हँसी आयी। मै ने अभिवादन स्वीकार करते हुए उत्तर दिया, "ईवनिंग सर, यस, वेरी प्लेज़ेण्ट नाइट। इजण्ट इट ?"

सुनते ही उस का चेहरा चिन्ताग्रस्त हो गया।

"ईवनिंग ? गुडनाइट नही ? मै ने समझा कि गुडनाइट कहना चाहिए।"

मै ने बताया, "गुडनाइट अकसर विदाई के समय कहा जाता है। शाम को जब पहली बार मुलाकात होती है तो गुड ईवनिंग कह कर स्वागत करना चाहिए।"

"ऐसा ?" इतना कह कर उस ने कमीज़ की जेब से एक नोटबुक निकाली

और यह अन्तर लिख लिया। फिर उस ने पूछा, 'म ने नाइस नाइट कहा था। आप ने क्या कहा ?" मैं ने कहा, "प्लेजेण्ट नाइट।" "जी हाँ, जी हाँ। प्लेज़ेण्ट। प्लेज़ेण्ट के माने क्या ? उस के स्पेलिंग क्या है ? आप बतायेंगे ? मैं लिख लेता हूँ।"

मैं हताश हुआ। अब मेरी समझ में आया कि शिन्द उठ कर क्यों चले गये थे। तो यही वह जर्मन है, अँगरेज़ी सीखने की कोशिश करने वाला! पोर्ट होल में से मैं ने बाहर देखा! आकाश का एक गोलाकार टुकड़ा दिखाई दे रहा था। ढेर से सितारे। वाकई रात बड़ी सुहावनी थी। निरभ्र और नाली। लेकिन इस अरसिक आदमी को उस की सुन्दरता में कोई रुचि नहीं थी। अगर किसी चीज़ में उस की रुचि थी तो वह अँगरेज़ी शब्दों के स्पेलिंग में।

उस की बात से मानो मैं फिर होश में आया। उस ने डिक्शनरी निकाली, उस में से एक पृष्ठ खोल कर वह बोला, "मिल गया! प्लेजेण्ट के माने प्लीजिंग। प्लीजिंग के माने ? अब तो अँगरेज़ी जर्मन डिक्शनरी लानी ही चाहिए। प्लीजिंग के माने क्या ? आप बतलाने की कृपा करेंगे ?" मैं उसे समझा न सका।

मैं ने उदाहरण दे कर अर्थ व्यक्त करने का प्रयत्न किया। आखिर वह समझ गया। मुझे भी कुछ अभ्यास हुआ। उस की टूटी-फूटी अँगरेजी समझ में आने लगी। यह भी समझ में आया कि उस के साथ किस तरह बात करनी चाहिए। धीमे-धीमे, सरल शब्दों और सरल वाक्यों का प्रयोग करना चाहिए। बोलते समय उस के चेहरे पर नजर टिकी रहनी चाहिए। शब्द समझ में नहीं आया तो उस के माथे पर चिन्ता की सलवटें नजर आती। तुरन्त पर्यायवाची शब्द, अन्य शब्द, उदाहरण, हाथ के इशारे, तरह-तरह के उपायों को काम में लाने का यत्न मैं करता। मैं ने बियर ऑफर की, लेकिन उस ने नहीं ली। सिगरेट से भी इनकार किया, लेकिन शिष्टतापूर्वक। मुझे वह अच्छा लगने लगा। उस का नाम काइटेल था। उन्मुक्त हास्य। उस के बात करने में अनुरोध का भाव होता। आँखों में प्रसन्नता दिखाई देती। लेकिन एक प्रकार की क्षमाशीलता भी। इस में सन्देह नहीं कि उस ने दुनिया देखी थी। हम बहुत देर तक बातें करते रहे।

मैं ने कहा, "आप शांघाई जा रहे हैं तो अँगरेज़ी सीखने की कोशिश क्यों कर रहे हैं ? आप को तो चीनी सीखनी चाहिए।"

उस ने उत्तर दिया, "मुझे शाघाई मे रोटी कमानी है। जो महत्त्व अँगरेजी का है वह चीनी का नही। आप को शाघाई के बारे मे कुछ जानकारी हे ?"

मुझे बिलकुल जानकारी नही थी। लेकिन मैं ने कहा, "थोडी-सी सुनी-सुनाई है। उस से लगता है कि महत्त्व हो या न हो, लेकिन चीनी के बिना आप को बडी तकलीफ होगी।"

उस ने हँस कर पूछा, "आप चीनी जानते है ?" मैं ने इनकार कर दिया तो उस ने कहा, "मेरा विचार है कि चीनी भाषा ही नही हो सकती। बाजार मे कुत्ते-बिल्लियो के खिलौने मिलते हैं। आप ने देखे है ? सिर पर मारते ही या पेट दबाते ही ची-ची, चूँ-चूँ करते है। मै समझता हूँ वही चीनी भाषा है!" इतना कह कर वह हँसा, मैं भी हँसा। उस की हँसी कितनी अनायास थी। मै ने कहा, "आप की हँसी बडी अच्छी हे!" जरा गम्भीर हो कर उस ने उत्तर दिया, "जी हाँ, अब लगता हे कि गला खुल गया है। चार साल हुए हँसना भूल गया था।"

उस के इन शब्दो से, विशेषकर उन को बोलने के लहजे से मै चौंका। लेकिन उस के व्यक्तिगत दु:खो के विषय मे बात करना मेरे लिए सम्भव नही था। इस लिए विषय बदलने के विचार से मै ने कहा, "आप का विचार वाकई बहुत अच्छा है। इस तरह चीनी बोलने वाले कागजी खिलौनो के कुत्ते-बिल्लियो को आप ने खोज निकाला तो आप की कितनी तकलीफें कम हो जायेंगी!"

"मुझ अकेले की क्यो, हजारो की तादाद मे हम जर्मन चीन जा रहे हैं। यह सब के लिए उपयोगी होगा।" उस ने आगे कहा, "वाकई इस खोज को पेटेण्ट करा लूँ तो मै अमीर बन जाऊँगा। रोटी की फिक्र खत्म होगी और अँगरेजी सीखने की मुसीबत भी टल जायेगी!" मै ने हँस कर कहा, "अँगरेजी सीखने की मुसीबत टल जायेगी तो आप-जैसो के साथ-साथ मेरे लिए भी यह खुशी की बात होगी। लेकिन आप को अँगरेजी अच्छी नही लगती ?"

उस ने कहा, "बिलकुल नही!"

"फिर कौन-सी भाषा आप को पसन्द है ?"

"मेरी मातृभाषा डाईश्—जर्मन।"

"तो बेकार यह कोशिश क्यो कर रहे है ?"

"शांघाई मे जर्मन की कोई कीमत नही ?"

"लेकिन इतनी बडी मुसीबत में अपने-आप को डालना, जर्मनी छोडना, अँगरेजी सीखना, यह सब हठ किस लिए ?" मैं ने पूछा।

उस ने हलके स्वर मे कहा, "मै अपने को जर्मन मानता हूँ। जर्मनी मेरी मातृभूमि है। डाईश् मातृभाषा। लेकिन जर्मनी मुझे अपना पुत्र नही समझता। मै यहूदी हूँ। निष्कासित हो कर शांघाई जा रहा हूँ। अब कोई आशा नही कि फिर जर्मनी के दर्शन होगे। अब कोई आशा नही कि उण्टर डेन लिण्डन मे बोली जाने वाली विशुद्ध जर्मन फिर कभी सुनाई पडेगी। इस लिए मुझे अब नयी भाषा सीखनी चाहिए!"

तो ये सब यहूदी है ? पल-भर मे सब स्पष्ट हो गया। गोरे लोग भी काले लोगो के साथ मिल-जुल कर रहते है। जहाज के इटालियन कर्मचारी हम हिन्दुस्तानियो को भी मानते है, पर इन की उपेक्षा करते है। एक जर्मन लडकी मदनानी के पीछे पडी है। वह दूसरी लडकी भी मन्नान के जाल मे फँसने लगी है। लुई की माँ शिन्दे की ओर स्नेह की आशा से देख रही है। सब का अर्थ एक ही है। तो ये यहूदी है! इन पर किये गये अत्याचारो के झूठे-सच्चे वर्णन मैं ने पढे थे। नाज़ियो ने इन का निर्मूलन करना शुरू किया है। इटली, हगरी, पोलैण्ड मे इसी द्वेष की जडे जमती जा रही है। सुनी-सुनाई बातो के आधार पर सब-कुछ जानता था। बम्बई मे था। ग्रैण्ट मेडिकल मे पढता था, तब नागपाडा की तरफ यहूदियो की एक बस्ती देखी थी। लेकिन आज यहूदी का नाम लेते ही जो चित्र मन मे उभर आते है, वे उस समय नही उभरते थे। यहूदी यानी धन-लोभी—शाइलॉक, मनुष्यता से शून्य, दुर्गुणो का भण्डार, नीचता की साकार मूर्ति, यहूदियो के बारे मे सब की यही धारणा है। लेकिन इस जाति का दुर्भाग्य जितना बडा, महिमा भी उतनी ही बडी है। सारी दुनिया मे एक इच जमीन भी इन की अपनी नही रही। पर यह भी सत्य है कि पिछला महायुद्ध इन्ही की धन-लालसा के कारण चार साल जारी रहा। अगले महायुद्ध के विस्फोटक कोठार इन्होने ही ठूँस-ठूँस कर भर रखे है। उन का विस्फोट भी धनवान्

यहूदियो के प्रतिशोध की इच्छा से ही होगा। यह मै जानता था। इग्लैण्ड को रूस से अनबन, अन्त मे अमरीका के युद्ध मे घसीटे जाने की सम्भावना, पैलेस्टाईन के झगडे के कारण अरब-मुसलमानो का जर्मनी की तरफ झुकाव— कही भी देखिए, सब की जड यहूदियो की राजनीति है।

जिन का अपना देश नही, मातृभाषा नही, पर जिसे समस्त ससार की सस्कृति के विकास का जुआ प्रमुख रूप से अपने कन्धे पर उठा कर आगे बढ़ते रहने का सौभाग्य ईसामसीह से ले कर आइन्स्टीन तक प्राप्त हुआ है ऐसी है यह यहूदी जाति। मै ने गौर से देखा। एक समूचा राष्ट्र इस आदमी से बदला ले रहा है। क्या अपराध है इस का ? नाजियो का कहना है कि पिछले महायुद्ध मे यहूदियो ने जर्मनी से विश्वासघात किया। लेकिन यही द्वेप का दर्शन अन्य देशो मे भी फैलने लगे तो ? आज के चार लाख खाकसार क्या कल कोटि-कोटि हिन्दुओ का निर्मूलन करने की कसम खायेंगे ? हिन्दुओ के सगठन क्या कल हिन्द्वेतर जातियो का नामोनिशान तक मिटा दने के लिए खून की नदियाँ बहायेंगे ? जिस समय राष्ट्र की आजादी के रास्ते मे रोडा बनने वाली छोटी-मोटी जमातो के ऊपर से विदेशी सत्ता का स्वार्थपूर्ण सरक्षण हट जायेगा तो क्या इन के आज के अपराध कल भुला दिये जा सकेंगे ?

तब क्या सुधार के साथ-साथ ये द्वेष की लपटें भी फैलती जायेंगी ? पिछले महायुद्ध का बदला है यह यहूदियो का निर्मूलन। मै हतप्रभ था। हो सकता है जर्मनी का पक्ष खरा हो, लेकिन मेरे सामने जो एक सीधा-सादा मामूली यहूदी खडा है, इस का क्या अपराध है ? फिर इस की बलि क्यो दी जा रही है ? व्यक्ति का सकट बडा है या राष्ट्र की आवश्यकता ? आज नही कई सदियो से यहूदी जाति अत्याचारो का शिकार बनती आ रही है। लेकिन आज के इन अत्याचारो का एक विशेष, नया अर्थ है। क्या भिन्न-भिन्न देशो के इतिहास मे इन की पुनरावृत्ति होगी ? मुसलमानो ने जीत कर हिन्दुस्तान को अपना देश बना लिया, पारसियो ने भीख माँग कर, आसरा पा कर हिन्दुस्तान को अपना देश बना लिया—इस तरह के राष्ट्रीय प्रतिशोध के नाजी दर्शन की जड इतिहास मे जम गयी तो मानव जाति की उन्नति—

मै सिहर उठा। ढेर सारे विचार, जिन मे कोई सगति नही थी। किस बात

के कारण अपना देश अपना हो जाता है ? कितने वर्षो से, कितनी पीढियो के रहने से मात्र भूमि को मातृभूमि का महत्त्व प्राप्त होता है ? पैलेस्टाइन यहूदियों का था। हिन्दुस्तान आज हिन्दुओ का है। कल वह वैसा ही रहेगा ? और आर्यो की बस्तियाँ दक्षिण मे पहुँचने से पहले हिन्दुस्तान किस का था ? मातृभाषा यानी किस की भाषा ? इन यहूदियो ने जर्मनी को डुबो दिया, लेकिन अपने को अभी तक वे जर्मन कहते है, डाईश् को मातृभाषा मानते है। क्या यह व्यावहारिक धूर्त्तता भर है ? इन की वास्तविक भावना क्या है ? इन के जन्मजात सस्कार क्या है ?

गिन्दे आ गये। गोद मे लुई था। माँ भी साथ थी। मै ने लुई से कहा, "गुड-नाइट"। उस की मा ने कहा, "से गुड-नाइट टु अकल", तो वह एकदम बोला, "gut nacht" गिन्दे ने कहा, "नो, यू स्कॅम्प, से गुड-नाइट इन इगलिश।" लेकिन गरदन हिला कर विशुद्ध जर्मन मे वह कहता है, "Nein Nein, Deutsch" "gut nacht."

नापोली का बन्दरगाह। जिनोआ से नापोली तक का सफर, जैसे छुट्टी के दिन सैर के लिए जा रहे हो। पूरे दिन का भी फासला नही। इटालियनो को तो यह ऐसा लगता, जैसे घर मे ही घूम-फिर कर आ गये है। बाहर के मुसाफिरो के लिए सब-कुछ कौतूहल-भरा। एक तो शहर यो ही बहुत खूबसूरत है। तिस पर भी ऐतिहासिक अवशेषों के कारण उसे विशेष प्रसिद्धि मिली है। पॉम्पे आई के स्मृतिचिह्न यही है। व्हेस्युव्हिअस का भयानक सौन्दर्य भी यही है। जहाज से युरोप छोडते समय, युरोप की धरती से आखिरी कदम यही से उठता है।

धूप तेज थी। जहाज रुक गया था। आठ बजे होगे। साढे नौ तक नाश्ते का समय था। लेकिन बन्दरगाह जाना था, इसलिए हर व्यक्ति जल्दी कर रहा था। आठ साढे-आठ तक सब नाश्ता कर चुके। जब मै वहाँ पहुँचा तो एक ही विषय पर चर्चा जारी थी। हमे कब उतरने दिया जायेगा ?

मै नीचे जाकर नाश्ते के लिए एक टेबुल पर बैठ गया। पूरा डाइनिंग-हॉल करीब-करीब खाली था। दस-पन्द्रह लोग होगे। उन का चाय-पान भी लगभग

समाप्त हो चुका था। दूसरे छोर पर एक टेबुल के किनारे कार्इटेल बैठा था। और एक यहूदी युगल। एक अधेड़ उम्र की महिला भी थी। शायद मिशनरी रही होगी।

वह यहूदी-युगल मेरी तरफ देख कर मुसकराया। मै भी उठा, उन की टेबुल तक जा कर एक कुरसी खींची और छपा हुआ मेनू हाथ मे ले लिया।

इतने मे हेंटी आयी। माँ साथ थी। पीछे-पीछे मन्नान। वह कल रात वाले कपडे ही पहने हुए थी। मै ने समझा कि बहुत गरीब होगी। लेकिन उसे देखते ही सब-कुछ याद आ गया। कल रात वह गुस्से मे चली गयी थी और फिर लौट कर नही आयी। मेरा अनुमान गलत निकला। अनुमान तो गलत निकला ही, साथ ही यह धारणा भी पुष्ट हो गयी कि वह लौंडो के पीछे-पीछे घूमने मे मजा लेने वाली आवारा लडकी नही है।

सब नाश्ता कर रहे थे। मै ने वेटर को ओट की खीर लाने का आॅर्डर दिया था। उसी की प्रतीक्षा कर रहा था। लोगो मे बन्दरगाह पर उतरने की चर्चा थी। वेटर बार-बार टेबुल के पास आता—किसी के लिए ब्रेड, किसी के लिए चाय, किसी के लिए मुरब्बा ले कर। इसी तरह दस मिनट बीत गये, लेकिन खीर का पता न था। मै सामने नैपकिन फैलाये चुपचाप बैठा था।

मै ने वेटर की तरफ गौर से देखा। सुगठित शरीर और चेहरे पर उद्दण्डता। वह फिर एक बार किसी के प्याले मे चाय उँडेल कर लौट गया। उस ने मेरी ओर देखा तक नही। तब मै ने उसे पुकारा और पूछा, "खीर की याद है तुम्हे?" उस ने निर्विकार चेहरे से उत्तर दिया, "हाँ, है।" मै ने जरा तेज आवाज मे कहा—"बी क्विक् एबाउट इट दैन!" लेकिन वह करीब आया और थोडा-सा झुक कर बोला, "उस टेबुल पर बैठो।" मै उस से पूछने वाला ही था कि इतने मे वह आगे बोला, "यह टेबुल गोरे लोगो के लिए है। तुम-जैसे काले लोगो के टेबुल उधर है।"

मै खट से उठ खडा हुआ। उस की गरदन पकड ली। ट्रे, केतली, चाय के बरतनो की झनझनाहट हुई। सभी विस्मित हुए होगे। उस वेटर के मुँह से आश्चर्यमिश्रित चीख-सी निकल पडी, "ओह मारिया!"

उसे झकझोर कर मै ने कहा, "यू स्वाइन, से इट अगेन एण्ड आई विल

मेक यू लिक दॅ फ्लोर, गॅट मी माई ओट मील हीयर ऐण्ड बी क्विक् एबाउट इट।"

सब दौडते हुए आये। जो यहूदी थे, वे भौचक रह गये। मन्नान मेरे पास आया। दो-चार वेटर भी आ?। उन के प्रमुख ने मुझ मे माफी माँगी। उस से भी क्षमा-याचना करवायी। मै फिर वैठा। कुछ देर के बाद नाश्ता करना शुरू किया।

इग्लैण्ड मे ऐसा होता तो शायद आश्चर्य न होता। उन्हे विजेता होने का घमण्ड तो है। लेकिन इटालियन्स! युरॅप के भिखमँगे सारे युरॅप मे गोरेपन मे भी सब से घटिया! मात्र अनुग्रह कर के जिन्हे हिन्दुस्तान तक व्यापारी यातायात करने का अवसर दे दिया गया था, उन इटालियनो की भी यह हिम्मत? मेरा खून खौल उठा था। लग रहा था कि सब की निगाहे मुझ पर टिकी होगी। इस एहसास के रहते मुझ से न ऊपर देखा जा रहा था और न कुछ खाया जा रहा था। आखिरकार टेबुल पर से सब चले गये तो कहो जरा अच्छा लगा। मै ने ऊपर देखा। हॅर्टा फिर मेरी तरफ देख रही थी। उस की दृष्टि मे स्नेह था।

नाश्ता खत्म हुआ। मै ने पाइप निकाला। एक के बाद एक दियासलाइयाँ जलाता रहा। वे बुझ जाती। ऊपर ही वेण्टिलेटर था। उस मे से आने वाली हवा के झोके उन्हे जलने नही देते थे। और हाथ भी अभी तक थरथरा रहा था। मेरे ध्यान मे यह बात नही आयी थी। आखिर हॅर्टा ने मुसकराते हुए उठ कर वेण्टिलेटर का मुँह फेर दिया, तब कही दियासलाई जली।

मै ने ऊपर देखा। उस के होठो मे अभी रखी हुई सिगरेट थी। मै ने वह जलाई और हृदय से कहा, "थैंक यू सो मच!"

उस के चेहरे पर सन्तोष की मुसकान थी। मै ने पाइप पर दियासलाई रखी, तो मुझे ध्यान आया कि हाथ का थरथराना बन्द हो गया है।

नेपल्स बहुत सुन्दर है। एक बार जाडे के मौसम मे कुछ दिन मै ने यहाँ बिताये थे। बर्फ ने जमीन को ढक दिया था। मानो शीतकाल की भयानक

तबाही पर प्रकृति ने वात्सल्य का शुभ्र आँचल फैला दिया हो। खेत, चरागाह, जंगल, मकान, सब का अपना-अपना अलग रूप खो गया था। हिम की असीम धवलिमा मे सब एकरूप हो गये थे। सब तरफ निस्सीम शान्ति। पेड सूख गये थे। शाखाएँ नंगी थी। लेकिन उन पर हिम की शुभ्रता छायी थी। सारी सृष्टि एक निरामय, शान्त, धवल और विराट् प्रार्थना-मन्दिर जैसी हो गयी थी। बर्फ से ढँकी पेडो की शाखाएँ प्रार्थना-मन्दिर की मोमबत्तियो-सी लगती। दैवी चमत्कार की प्रत्याशामे जड-चेतन मौन हो जाता है, वैसी ही आतुरता उस निस्सीम शान्ति में थी।

सामने नजर दौडायी। नेपल्स नगरी से मेरा वह प्रथम और सम्पूर्ण साक्षात्कार था। समुद्र के धरातल से ले कर पहाडो की चोटियो तक शानदार छोटे-छोटे घर। आकाश मे बादल तैर रहे थे। उन मे भी ऊपर एकाकी खडा था व्हेसुव्हिअस का शिखर! बादल, कोहरा, बर्फ, सब के ऊपर वह कुछ ऐसा सुशोभित हो रहा था कि जैसे महाकाव्य की कल्पनाओं के झुरमुट मे कोई उदात्त विशाल, क्रान्तिकारी तत्त्वचिन्तक हो! नीचे की घाटी मे आधुनिक इटली का सामर्थ्य प्रतिलक्षित था। कारखाने, बन्दरगाह का नाविक-दल मँडराते हुए विमान, दूर चट्टानो पर स्थित जलमन्दिर, उद्यानो के विहारगृह, और सब पर अनुपम प्रकृति-सौन्दर्य की छाया। सब देख कर एक क्षण को लगा, मानो रसिक, पराक्रमी और दार्शनिक राजपुरुष के सम्बन्ध मे प्लेटो का स्वप्न सत्य हुआ है!

लेकिन उन सुन्दर क्षणो का विध्वस इतनी सहजता से हो गया जैसे फूल मसल दिये गये हो। वह उपाहार गृह था। वहाँ बैठने के लिए कुछ खाना-पीना जरूरी था। कम से कम शराब तो खरीदनी ही पडती। लेकिन हॅर्टा और हरमान दम्पति ने मोटर का किराया देने में ही बडी हिम्मत दिखाई थी। और ज्यादा पैसे खर्च करना उन के लिए असम्भव था। साथ ही, मै और शिन्दे भी उन्हे छोड कर पीछे नही रह सकते थे।

सब मन मार कर लौट आये। गाडी मे हॅर्टा ने आँखो पर रूमाल रख लिया। फ्राऊ हरमान ने उस से कहा, "ऐ लडकी, जरा बाहर तो देख। शायद ही फिर देखने को मिलेगा। दुकानें कितनी खूबसूरत है!"

हॅर्टा ने उत्तर दिया, "देखते ही ख़रीदने की इच्छा होती है। और फिर घुटन होती है। यही अच्छा है कि पहले ही आँखों पर परदा डाल लिया जाये !"

डेक के रेलिंग पर झुक कर, ठोड़ी टिकाये मैं खड़ा था। फेन के छींटे मुँह पर आते। जहाज़ की बत्तियों की रोशनी दोनों तरफ़ पानी पर फैली हुई थी। जहाज़ से कटा हुआ पानी उछलता; उस का फव्वारा रोशनी में चमक उठता और नीचे गिर जाता।

डेक के बीचों-बीच एक छोटा-सा आड़ा रेलिंग था। आगे का भाग दूसरे छोर तक ख़ाली ही था। लेकिन यात्रियों के लिए वह नहीं था। मोटी-मोटी रस्सियों के ढेर, लोहे की जंजीरें, लंगर उठाने और गिराने की छोटी क्रेन, और उस तरफ़ जहाज़ की नाक, उस पर झण्डी का खम्भा। बीच में एक छोटी-सी लोहे की कमानी थी, जिस पर एक बहुत बड़ा लोहे का घण्टा टँगा था।

उन रस्सियों के ढेर पर दो-एक खलासी बैठे हुए बीड़ी पी रहे थे। सारे डेक पर मुश्किल से दो-चार आदमी होंगे। लेकिन अँधेरा था। पहचान पाना मुश्किल था। बिलकुल कोने में एक जोड़ा रहा होगा। ऐंग्लो-इण्डियन लड़की और एक गोरा युवक। वे दोनों स्त्री-पुरुष हैं, यह ध्यान में आते ही मैं ने गरदन घुमा ली। मुझे पता नहीं चला कि हॅर्टा कब आ कर खड़ी हो गयी थी। रेलिंग पर कुहनियाँ रखे दोनों हथेलियों के बीच में ठोड़ी टिका कर वह सामने देख रही थी। जब उस ने देखा कि मैं ने गरदन घुमा ली है, तो बोली, "मैं आयी हूँ।" उस सीधे-सादे सरल वाक्य पर मुझे हँसी आ गयी। मैं ने कहा, "जी हाँ, कहने ही वाला था कि मैं देख रहा हूँ। लेकिन यह सच नहीं, क्योंकि अँधेरे में ठीक-ठीक दिखाई नहीं देता।" फिर सामने देखते ही उस ने कहा, "यह भी सच नहीं। अगर मैं कहूँ कि आप दिखाई नहीं देते तो शायद चल जाये, क्योंकि आप साँवले हैं।" मैं ने कहा, "मैं साँवला हो सकता हूँ, लेकिन आप के बालों जितना काला तो क़तई नहीं। आप का पूरा चेहरा तो लहराते बालों से ढँका है, आप कैसे दिखाई देंगी ?" उस ने गरदन घुमी कर मेरी तरफ़

देखा। कुछ बोलने को थी कि इतने में नीचे का पानी कुछ अधिक उछला और उस का पूरा चेहरा भीग गया।

उस की देह पर पतला-सा कोट था। लेकिन वह उस ने केवल ओढ़ रखा था। एक हाथ से उसे पकड़े हुए वह बोली, "माफ़ कीजिए। आप के पास रूमाल है?" इतना कह कर उस ने मेरे हाथ के रूमाल का सिरा पकड़ लिया। उसे पीछे खींचते हुए मैं ने कहा, "यह न लीजिए। मैं दूसरा देता हूँ।"

"क्यों?"

"वह बहुत गन्दा होगा!"

"रहने दीजिए। मेरे रूमाल से ज्यादा गन्दा तो निश्चित रूप से नहीं होगा। आप ने यह आज ही निकाला है न?"

"जी हाँ!"

"तो दीजिए। मेरा तो दो-तीन दिन का है।" लेकिन मैं ने कोट के बाहर की ऊपर वाली जेब में शोभा के लिए रखा हुआ अच्छा रूमाल उसे दे दिया। उस ने मुँह पोंछा और माथे तथा गालों पर चिपके हुए बालों को पीछे हटाया। रूमाल लेते समय मैं ने कहा, "नाराज़ न होइए, लेकिन अभी आप ने कहा कि चार-पाँच दिन से एक ही रूमाल से आप काम चला रही हैं। क्यों?"

"रूमाल ही नहीं, दो दिन से फ्रॉक भी एक ही पहन रही हूँ।"

"जी हाँ, मैं ने देखा है। लेकिन क्यों?"

"मेरा सामान नहीं मिल रहा है।"

मैं ने आश्चर्य से कहा, "सामान खो गया? कौन-सा सामान?"

"सब सामान तो खो नहीं गया होगा। लेकिन नहीं मिलता।"

मैं ने कहा, "ऐसा कैसे हो सकता है? बॅगेज रूम में होगा। आप ने स्टुअर्ड से पूछा? चलिए, हम पूछेंगे!" इतना कह कर मैं चलने के लिए मुड़ा भी।

मेरा उत्साह देख कर उसे हँसी आ गयी। लेकिन इतना याद है कि उसी क्षण मेरी सहानुभूति से उस की आँखें चमक उठीं। उस ने स्टुअर्ड से पूछ लिया था। बॅगेज-रूम में देखा था। ऊपर नीचे, बीच के रास्ते में, दूसरी केबिनों में, सब जगह बार-बार जा कर देखा था; तलाश किया था। लेकिन सामान का पता नहीं चल रहा था। सब कपड़े, कुछ पुस्तकें, दवाइयों की कुछ शीशियाँ,

रूपसज्जा का सामान, उस की माँ के बक्से—कुछ भी नही मिल रहा था।

मुझे रोमाञ्च हो आया। लगभग एक महीने का लम्बा सफर और बदलने के लिए एक कपडा तक नही! मुँह पोंछने के लिए रूमाल तक नही! उस बुढिया की क्या हालत होगी? और यह खूबसूरत लड़की! अच्छे कपडो का न होना इस के लिए कितनी कडी सजा है। मैं ने रूमाल उस के आगे किया और कहा, "यह रहने दीजिए अपने पास। नया ही है।"

उस ने गरदन हिला कर कहा, "नही, नही! कल-परसो तक मिल जायेगा मेरा सामान।" मै ने आग्रह किया लेकिन उस ने नही लिया। सहसा सामने उँगली से कुछ दिखाते हुए विषय बदल कर वह बोली, "बताइए, वह सितारा है या बत्ती?"

मैं ने देखा। सच, पहचान पाना एकदम मुश्किल था। क्षितिज के बहुत ऊपर तो नही, लेकिन आकार मे काफी बडा था। वह प्रकाशबिन्दु देख कर मै ने कहा, "सितारा ही है।"

उस ने गरदन हिलायी और कहा, "नही, बिलकुल गलत!"

कुछ उत्तेजित हो कर मै बोला, "सितारा ही है। लगाइए शर्त!" तो उस ने कहा, "आप पैसे के अलावा कोई बात ही नही करते। मैं ने कहा न आप से कि मै आज बहुत गरीब हूँ।"

मै लज्जित हुआ। इस बात का दुःख हुआ कि मामूली-सी बात-चीत मे भी उसे मै उस की दुःखद स्थिति का एहसास कराये बिना नही रह सका। उस ने मेरी तरफ घूर कर देखते हुए कहा, "रात कितनी सुहावनी है और आप के मन में सिर्फ पैसे और शर्त के विचार आते हैं! लगता है आप कभी प्रेम नही कर पायेंगे किसी से!"

मैं ने हँस कर कहा, "नही, तो न सही, लेकिन विवाहित जीवन मे मै पत्नी को सुख दे सकूँगा या नही? आप का क्या खयाल है?"

और बीच का रेलिंग पार कर के हम आगे के डेक पर गये। जहाज़ की गति बढने लगी थी। हवा जोर मे बह रही थी। बहुत ऊँचे उछलते पानी से सामने का डेक भीग गया था। रेलिंग गीले हो गये थे। हवा के झोको ने हर्टा को परेशान कर दिया। बाल रह-रह कर हवा मे लहराते। सिर्फ ओढ रखा

था ओवरकोट । उस मे हवा भर जाती । मै ने कहा, "आप कोट पहन लीजिए। तकलीफ नही होगी ।"

"नही, मेरा नही है यह ! फ्राऊ हरमान का है । मै कुछ मोटी हूँ ! शायद फट जायेगा ।"

हम रेलिग के पास खडे रहे । वह कोट को रेलिंग से दबाती हुई टिक कर खडी हो गयी । मे ने रूमाल से रेलिग जरा-सा पोछा और कुहनियाँ टिका दी ।

निस्सीम शान्ति । किन्तु उस मे एकान्त की भयावहता नही थी । जहाज की, पानी की आवाजें । कान उन के आदी बन गये थे । उन की तरफ ध्यान ही न जाता । लहरे अलसायी हुई-सी उठती, करवट बदलती और फिर विलीन हो जाती । सागर की गहरी कालिख । क्षितिज के काफी ऊपर तक उस की छाया आकाश मे फैली हुई थी । क्षितिज उस मे छिप गया था । चारो ओर गीली गन्ध । लेकिन उस मे, हवा मे ताजगी थी । साँस तक उत्साह से भर उठती ।

उस शान्ति ने ही जैसे हमे मूक बना दिया । न कुछ कहा, न एक दूसरे की तरफ देखा । हॅर्टा जरा मेरी तरफ सरक आयी । मै ने देखा । उस ने भी । उस दृष्टि मे स्नेह की ऊष्मा छलक रही थी । बीच मे ही हवा का एक झोका आया । उस के ओवरकोट की लटकती बाँह उड कर मेरे कन्धे पर गिरी । मै ने उसे हाथ मे पकड लिया ताकि फिर न उड जाये, और रेलिंग पर दबा रखा । हॅर्टा ने पूछा, "क्या कर रह है आप ?"

पता नही कैसे जवाब निकला । मै ने कहा, "आप के हाथो मे हाथ डाल कर खडे रहना चाहिए, लेकिन मै केवल इस बाँह से ही सन्तुष्ट होने की कोशिश कर रहा हूँ ।" उस ने सामने देखते हुए कहा, "अल्प सन्तोपी जीव किसी को पसन्द आते हो तो आया करे लेकिन मुझे बिलकुल नही ।"

मै ने तत्काल बाँह छोड दी । हाथ मे हाथ डाला और उस की उँगलियाँ दबा ली । फिर सामने देखते हुए ही वह बोली, ' आप भलेमानस है न ? यह मत भूलिए कि अभी हम एक-दूसरे से परिचित नही है । मेरा नाम हॅर्टा है ।"

"और मेरा नाम चक्रधर विध्वस ।"

अपने को छुडाते हुए वह बोली, "हे भगवान् ! लगता है कि हमारी दोस्ती हो नही पायेगी ।• कितना मुश्किल है यह नाम ?" मै ने कहा, "माफ कीजिए ।

मेरा नाम रखते समय माँ के ध्यान मे नही आया था कि कभी आप से भी मुलाकात होगी।"

"इसी मुश्किल नाम से पुकार कर माँ आप से प्यार करती रही?" मै ने उत्तर दिया, "नही। घर मे सब मुझे बाबू कहते है।"

"बॉब?"

मेरे नही कहने पर उस ने आगे बोलने का अवसर मुझे नही दिया और बोली, "मै आप को बॉब ही कहूँगी। ज्यादा-से-ज्यादा मिस्टर बॉब!"

मै हँसा और बोला, "जैसी आप की इच्छा, लेकिन मिस्टर बॉब ही कहना चाहिए। जब तक हमारा घनिष्ठ परिचय न हो, तब तक।" उस ने जोर से गरदन हिलायी। हाथ मे हाथ लिया और कहा, "मै नही कहूँगी मिस्टर, बॉब ही कहूँगी। कहूँ न बॉब?" उस का हाथ मेरे हाथ मे था। उसे दबा कर मै ने कहा, "हाँ, हॅर्टा!"

सुहाना सपना जब टूटता है, आँख खुलती है, तब मन उदास हो जाता है। रात सोया तब कितनी सुन्दर तसवीरें आँखो के आगे तैर रही थी। बार-बार मन उन मे जीता। उछलता, कूदता। लेकिन उस स्वप्न का नशा आँखो पर छा गया और पता ही नही चला कि नीद की वेहोशी कब उन मे उतर आयी। नीद खुली, तो नौ बजे थे। नाश्ते का वक्त निकल चुका था। शरीर मे सुस्ती थी। लेकिन मन मे ताजगी। स्टुअर्ड को बुलाया। कमरे मे ही चाय मँगवायी और पोर्टहोल की ओर देखते हुए फिर तकिये पर सर रख कर लेट गया।

मैं बाहर देख रहा था। कल की यादे मन मे उभरती आ रही थी! उस यात्रा मे जहाज पर मुझे एक अजीब आदत पड गयी, पिछली घटनाओ को मैं स्मृति में दुहराता रहता, केवल एक तटस्थ आदमी की तरह। जो देखा, वह घटित कैसे हुआ, उस समय की परिस्थिति क्या रही होगी, उस व्यक्ति का बर्ताव अकेले में कैसा रहा होगा, उस की यातनाएँ, वेदनाएँ, क्लेश, क्रोध, हर्ष, उत्साह सब के चित्र कल्पना से चित्रित करता, खेल का साज सजाता, जो बीत गया था, उसे फिर से जीने की कोशिश करता।

और कल्पना को प्रेरणा देने वाली बातें भी कितनी थी ! प्रतिदिन नया दृश्य, नये अनुभव, नये व्यक्तियो से परिचय, उन की दुनिया मे प्रवेश और उन के अन्तरंग मे भी ! मै सोचने लगा । आठ ही पहर बीते होगे । इस लडकी से कभी बात तक नही हुई थी । और आज सुबह ? अच्छा-खासा अनुभवी मैं; मगर मेरा शरीर भी रोमाचित हो गया । मेरा यह शरीर क्या मेरा ही रहा है ? अब वह बिस्तरे पर खोल मे रखे सितार जैसा निष्प्राण लगता है । रात के मैले कपडो के कारण उस की हालत और भी खराब हो गयी है ! लेकिन इस त्वचा का एक भी रन्ध्र ऐसा नही होगा जिस मे कई बार झूठे-सच्चे प्यार के मधुर कूजन की प्रतिध्वनियाँ न गूँज उठी हो ! मेरे होठो पर पवित्र-अपवित्र चुम्बनो का स्वाद बार-बार लहराया है । इन आँखो ने अनेक सागरो की नीलिमा देखी है । बहुत-सी नज़रो की गहराई को थाहा है !

कल रात हॅर्टा से मैत्री हुई । अगर शाम को कोई कहता कि उस अनुभव से मन जाग उठेगा, तो मैं कभी उस पर विश्वास न करता । उसे पागल, नौसिखिया समझ कर टाल देता ! लेकिन अनुभव कुछ और ही रहा । इतने आवेग से शरीर फिर सजीव हुआ, जैसे पहले कभी कुछ हुआ ही न हो । मन पर चैतन्य छा गया । मै नहीं जानता कि केचुली गिर जाने के बाद नाग जवान हो जाता है या जवानी का नया जोश उमड आते ही वह केचुली गिरा देता है । लेकिन कल हॅर्टा की बाँहो मे नहाया हुआ यह शरीर, लगता है कि इस का सारा मैल धुल गया । हॅर्टा की तन्मयता भी अपूर्व थी । हमारे पीछे वह जोडा खडा था । मैं ने यो ही उधर नजर घुमायी, तो मेरी ठोडी पकड कर उस ने मेरा मुँह फेर दिया । मैं ने पूछा, "क्यो ?" तो स्निग्ध स्वर मे बोली, "बॉब उधर मत देखना । बेचारे अपने सुख मे खोये हुए है । देखोगे तो ऐसा अनुभव करेंगे जैसे चोरी करते पकडे गये हैं ।" मैं ने जान-बूझ कर कहा, "खोये हुए है यानी क्या ?"

उस ने मेरे कन्धे पकड कर मुझे घुमा दिया । खुद भी सामने की तरफ घूम गयी । हम दोनो देखने लगे । रेलिंग कार्डबोर्ड-सा बिलकुल चित्र-जैसा दिखाई दे रहा था । उस के पीछे अथाह नीलिमा । उस युवक ने लडकी को अपनी बाँहो में ले लिया था । उस के आलिगन मे बेसुध, कमर के पास धनुराकृति बनी हुई उस की कृश मनोहर देह ! और वह उसे चूमता हुआ !

ऊपर कप्तान की केबिन मे घण्टी वजी। क्षण-भर को सर्चलाइट की रोशनी डेक पर फैल गयी। उन के शरीरो की रेखाकृतियाँ स्पष्ट हो उठी। पीछे के तारे लुप्त हो गये। लेकिन फिर अन्धकार। और केवल नीली पृष्ठभूमि पर तारो की मद्धिम रोशनी मे अंकित छाया चित्र।

हॅर्टा ने गरदन घुमा कर मेरी तरफ देखा और कहा, "चलो, अब इस वस्तु-पाठ से पीठ फेर कर पाठ दुहराये।"

उस की ढिठाई से मै चकित हो उठा। मै ने उसे एकदम पास खीच लिया। उस के बाल पीछे हटा दिये और उसे चूम लिया। इतने समय से हम वैसे ही खडे थे और ध्यान ही नही दिया था कि उस का कोट गिर पडा है। थोडी देर के बाद ठण्डी हवा चुभने लगी, तब वह और भी ज्यादा मुझ से सट गयी और बोली, 'बॉब, ठण्ड बहुत लग रही है। मुझे और करीब लोगे?"

मुझे उस चुम्बन की याद इस लिए नही आती कि वह पहला चुम्बन था। नही, वह पहला नही था। न उस का, न मेरा। पहला, दूसरा यह गिनती सम्भव ही नही थी। बार-बार हमारे होठ एक-दूसरे को कस लेते। अब ताज्जुब होता है। मेरे होठ होटल के जाम जैसे अपवित्र हो चुके है। लेकिन अनुभवी है। उस के चुम्बन मे हिन्दुस्तानी चुम्बन की शालीन लुका-छिपी नही थी; लेकिन साथ ही स्वैराचारी स्त्री की घिनौनी निर्लज्जता भी नही। उस मे समर्पण का आवेग था—वह, जो भावनाओ के बवण्डर के बाद स्थिरचित्त युवती की अनुमति मे होता है। उस मे सरलता थी, संकोचहीनता थी, चुनौती थी और अतृप्ति थी। उस की यह अतृप्ति तो बार-बार व्यक्त हो उठती। वह लगातार सट कर खडी थी। साँस तेज चल रही थी। हृदय की धडकनें साफ नजर आती थी। वह हाथ से पसलियाँ दबाती हताश सी मेरी तरफ देखती, बीच-बीच मे थरथरा उठती और अस्फुट स्वर मे कहती, "इस सुरूर से डरती हूँ, बॉब! मुझे सहारा दो!"

मेसिना की खाडी पास आ गयी थी। जहाज की रफ्तार कम होने लगी। पानी की हलचल कम हो गयी और इटली का आखिरी सिरा रेजिओ दिखाई देने लगा। दोनो किनारो पर दीपमालाओ की भीड उमड आयी। अब पानी शान्त हो गया था। उस मे रोशनी की परछाइयाँ नजर आने लगी। समुद्र के

किनारे से ऊपर आकाश तक पहुँची ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ। उन पर बसे नगरो की सिर्फ बत्तियाँ नजर आ रही थी। दूर से लगता कि दीपमालाओ की आराइश सजायी गयी है। रोशनी पानी मे घुलने लगी। दायी तरफ सिसिली। सामने की चट्टान पर एक दीपगृह था। उस की रोशनी पानी पर घूमती और बीच में ही अदृश्य हो जाती। इतने मे सामने एक छोटा जहाज आडा चला गया। प्रकाश-किरणो की खूबसूरत बुनावट जल पर अंकित हो गयी। जैसे मधुर अनुभूति की लहर सिर से तलुवो तक पहुँच जाती है, वैसे ही जल मे प्रतिबिम्बित प्रकाश-किरणो की धाराएँ लहरो के फूटे मुख से अतल तक थरथराती चली गयी। हॅर्टा अपलक देख रही थी। मुझ से बोली, "बॉब, यही सुख की सीमा है क्या? परसो जर्मनी से बाहर निकली। मेरे लिए वह एक कब्रिस्तान बन गया था, अत्याचार, अपमान, घृणा और प्रतिशोध मे भरा हुआ। कितना सुन्दर है यह पुनर्जन्म!"

मै ने चौक कर उस की तरफ देखा। वह सचमुच जैसे होश मे नही थी। जहाज मेसिना के सामने आया। दीपगृह की रोशनी बीच-बीच मे हमारे ऊपर पड रही थी। चेहरा फुहारो से गीला हो आया। उस के हवा मे लहराते बाल कभी मेरे गालो पर बिखर कर चुभते और मुझे रोमाचित कर देते। उस की बोझिल आँखें, माथे पर एकाध लट चिपकी हुई, नथुनें, होठ, बल्कि समूची देह ही शर-सन्धान किये हुए धनुष-जैसी आतुर! उस ने मेरे हाथ कमर मे कस लिये। इतने मे दीप-गृह का प्रकाश हमारे ऊपर फैल गया। मै ने धीमे स्वर मे कहा, "हॅर्टा, यह क्या कर रही हो? पीछे के डेक पर लोग आ-जा रहे हैं। ये देखेंगे।"

"उस ने झट से मेरे हाथो को हटा दिया। फिर मेरी तरफ मुँह कर के खडी हो गयी और उत्तेजित स्वर मे बोली, "मुझे किस का डर है? जीवन का असीम सुख मेरे सामने खडा है और तुम कहते हो कि मै इसे लुका-छिपी मे खो बैठूँ? बिलकुल नही। आने दो सब को। मै सब को बताऊँगी, कभी जीवन मे सुखी नही थी, दुःख की पराकाष्ठा सह चुकी हूँ, अब सुख की कुछ घडियाँ आयी है तो उन्हे जी रही हूँ।"

उस की आवाज तेज होने लगी। मै ने उस के कन्धे पर हाथ रखे और

प्रकृतिस्थ करने के लिए कहा, "हॅर्टा !" उस ने जोर से गरदन हिलायी और बोली, "बॉब, तुम से ही मेरा सुख देखा न जाता हो, तो कह दो। ऐसा तो नही है न ? तो फिर मै किसी से नही डरती। आने दो सब को। लेकिन यही क्यो, मै खुद घण्टा बजाती हूँ, सब को बुलाती हूँ और कहती हूँ हम दोनो ने बहुत-बहुत सुख पा लिया।"

मै देखता रह गया। उस घण्टे की तरफ मेरा ध्यान गया। उस का भी गया। उसे सहसा जोर से हँसी आयी। मै ने पूछा, "हँस क्यो रही हो ?" उस ने बताया, "अचानक याद आ गयी। ब्याह के बाद भी चर्च का घण्टा बजा कर हर्ष का उद्घोष किया जाता है ! मनुष्य के सस्कार की जडे बहुत गहरी होती हैं न ?"

मै बर्थ पर लेटे-लेटे सोचता जा रहा था। स्टुअर्ड आया, उस ने कमरा साफ किया। कूडे की टोकरी, पॉलिश करने के लिए जूते, मैले तौलिए, सब वह ले गया। जाते-जाते उस ने हँस कर कहा, "आप रात मे जी भर कर जागते है और सुबह लेटे रहते है देर तक। अब लच का समय हो रहा है।"

वह चला गया। मै उठ बैठा। बाहर सारा जहाज रोजमर्रा के कामो मे व्यस्त था। मै नीचे उतरा। ड्रेसिग गाउन पहना। आईने के सामने खडे हो कर दाढी के लिए साबुन मलना शुरू किया। मन मे विचारो का अनवरत क्रम चल रहा था।

रात के अन्धकार की प्यार की मधुर बातें दिन के व्यवहारो की प्रखरता मे कितनी कठोर मालूम होती है ! उस समय की तमाम मीठी यादें। उस समय की ही नही, प्यार के जितने खेल मै खेल चुका था उन सब की एक-एक कर के याद करने लगा। सब से पहले उमा से परिचय। तब से ले कर आज तक सब का एक ही अर्थ। ऐसे खेल मे जीतने का सुख सच्चा होता है या खेलने भर का ? अतृप्ति मे भी निराशा और तृप्ति के बाद भी असन्तोप—यही जिस का स्वरूप है उस प्रेम के खेल में सचमुच कोई मजा होगा। लेकिन प्रेम होता भी है क्या ? हॅर्टा का होगा मगर मेरा ? यह भी कैसे कहूँ कि हॅर्टा का होगा ? कल परिचय

तक नही, और आज यात्रा की एक अन्तरग सगिनी। उस का क्या भरोसा? लेकिन भरोसे की जरूरत ही क्या है? अगर दिल बहलाने के लिए ही वह खेल रही हो तो दाँव मे रग लाने की कुशलता मेरे पास थी। कुछ प्रहर पहले का परिचय, घडी-भर की दोस्ती और पल-भर की प्रीति! विदा होते ही दूसरा दिन भी नया और रात भी नयी, यह मेरे जीवन मे कई बार हो चुका था।। परसों पोर्ट सईद। सप्ताह-भर के बाद बम्बई। बाद मे विस्मृति की टोकरी मे जिन अनेक लडकियो के नामो और चिट्ठियो का कूडा मै ने फेंक दिया था, उन मे हॅर्टा का एक नाम और बढ जायेगा। इस मे सोचने की क्या बात है? होगी कल की रात सुहावनी। पेरिस की रात भी बडी रंगीन होती है। लेकिन दूसरे दिन कोई भला उस के बारे मे कभी सोचता भी है?

मै ने ब्रुश धोया। उस्तरा साफ किया। चेहरा थोडे-से पानी से भिगोया और पोछा। उस पर क्रीम मला। नहाने के लिए बाहर जाना था। बाल बिखरे हुए थे। कंघी करने लगा। आईने मे देखते-देखते चेहरे की तरफ ध्यान गया। मेरी आँखें देखने वाले की थाह पानेवाली है। मुखमण्डल पर समृद्धता की क्रान्ति है। और उस मे तारुण्य का सम्मिलन! रेशम-जैसे मुलायम बाल। होठो पर विलासी वृत्ति की झलक। मन की दृढता प्रकट करने वाली ठुड्डी। सब मिला कर चेहरा व्यक्तित्व-सम्पन्न था। उमा हमेशा कहा करती, "तुम्हे पहली बार देखते ही छाती धडकने लगती है। जाने कैसा डर लगता है।" प्रेम को भीतर ही भीतर छिपा रखने का भय था वह। सहसा मन मे विचार आया। उमा का अनुभव तो है ही। दूसरी कई लडकियाँ भी इसी चेहरे के कारण आकर्षित हुई। यह भी कैसे मान लिया जाये कि आज हॅर्टा सिर्फ खेल रही है? बेचारी सचमुच आकर्षित हो गयी हो तो? अनेक इतिहास अपने को दुहरा उठे तो? ठीक है कि उस ने यह नही कहा कि मेरा चेहरा देख कर मन में भय पैदा होता है, लेकिन अपने प्रेम को उस ने मान तो लिया। वह झूठ कैसे हो सकता है?

मन मे उधेड बुन चल रही थी। मै ने बाल सहेजे। स्लीपर पहने। तौलिया लिया। साबुन, स्पज, सब ले कर बाहर निकला। गुसलखाने मे गया। वहाँ ठण्डे और गरम पानी के नल थे। पानी मिला कर जरा-सा गरम रखा और टब

मे छोड दिया। सिगरेट जलायी और पानी की धार की तरफ देखते हुए स्टूल पर बैठ गया।

करती होगी हॅर्टा प्यार! शायद खिलवाड भी हो जाये उस के साथ। मै बम्बई उतर कर चला जाऊँगा और मुझे छुटकारा मिलेगा। पीछे जो होना हो, हुआ करे! स्त्रियो की निष्ठा पर मेरा विश्वास नही था। मे जानता था कि अगर प्यार के खेल मे ठोकर खा कर स्त्री गिर पडती है तो वह इतनी बेशर्म जरूर होती है कि फिर से उठ कर बैठ जाये। हॅर्टा की इतनी चिन्ता करने की क्या जरूरत है? आज हँसेगी, नाचेगी, खेलेगी, कूदेगी, कल थोडा-सा रो लेगी। फिर कोलम्बो मे नये दोस्त बनायेगी। उमा के शब्द अकसर याद हो आते है, 'मै ने तुम से प्यार किया, वह न झूठा था, न है। लेकिन मुझे और किसी से प्यार हो गया है। हृदय ने असीम वेदनाएँ सही। देखते तो तुम क्षमा कर देते।"

"वेदनाएँ? उसी वक्त मै ने कहा था प्यार का नाटक बहुत हुआ। अब वेदनाओ का रहने दो।" स्त्रियाँ सचमुच कभी वेदनाएँ सहती है? मनोविज्ञान पर एक जर्मन लेखक की पुस्तक पढी थी मै ने। प्रेम-निराशा के फलस्वरूप नही, वैज्ञानिक तर्कों के आधार पर उस ने सिद्ध कर दिया था कि स्त्री-जाति मूलत निष्ठुर हृदयहीन, और अत्यन्त क्रूर है। स्त्रियाँ अच्छी नर्से बन जाती है, इस का कारण भी यही है। बीमारी, दुर्घटना, शल्य-क्रिया के सब हृदय-विदारक दृश्य वे देख सकती है। हम पुरुषो से नही देखे जाते। इसी लिए ऐसे वातावरण मे रह कर स्त्रियाँ अच्छी नर्से बन सकती है। प्रेम हो और वियोग सहना पडे तो भी यह निश्चित है कि हॅर्टा मरेगी नही।

हॅर्टा नही मरेगी। लेकिन मै? मुझे अपने-आप से एक बात माननी पडी। उमा के बाद के अनुभवो का छिछलापन हॅर्टा की मैत्री के समय मुझे प्रतीत नही हुआ। हो सकता है कि मेरा आकर्षण भी सच्चा हो! उस का स्वरूप समझ मे न आया हो अभी तक! तो क्या मै फिर एक वार इस जाल मे फँसनेवाला हूँ? लेकिन फँसनेवाला यानी क्या? मेरे भीतर कडुवे अनुभवो का जहर था। शराब का पहला जाम पीने के बाद जो फुर्ती पैदा होती है उस का कारण शराब ही है। किस दूकान मे बैठ कर हम पीते है इस से उस का कोई सम्बन्ध नही

होता। स्त्री-सहवास की कल्पना से उत्पन्न होने वाली उत्तेजना वैसी ही सुखदायी है, लेकिन वह सहवास होने की घटना पर ही निर्भर होती है। किसी खास स्त्री पर वह निर्भर होती है ऐसा नही कहा जा सकता। यह मेरा मत था। हॅर्टा के बदले वह पोल्ल लडकी मेरी दोस्त बन जाती तो ? शायद कोई फर्क न पडता।

मन से एक-दो बार फिर पूछने की कोशिश की। सचमुच कोई फर्क न पडता? लेकिन मै फैसला कर चुका था। खेलना ही है तो खेलेंगे। मै अपनी चिन्ता करूँगा। हॅर्टा को अपनी करनी चाहिए। उस का उत्तरादायित्व मुझ पर नही।

सिगरेट खत्म हो गयी थी। मै ने कपडे उतारे और नहाना शुरू किया।

ठीक-ठीक पता ही नही चलता था कि जहाज पोर्ट सईद कितने बजे पहुँचेगा। कोई समाचार ले आया कि रात के दो बजे जहाज बन्दरगाह से लगेगा। सब का अन्दाजा था कि दस के करीब वहाँ पहुँच जायेंगे। इस लिए सब अपना-अपना प्रोग्राम बना रहे थे जैसे सामान खरीदना, पत्र डालना, तार भेजना, सिर्फ घूमना-फिरना। जो अनुभवी थे उन्होने टोलियाँ बनायी। अरब-टाउन जाना और हुडदग मचाना। वहाँ के लिए गुप्त योजनाएँ भी तैयार की गयी। खलासियो और मुसाफिरो के लिए यो तो हर बन्दरगाह पर 'घर' होते है, लेकिन रँगीले मुसाफिरो की नजरो मे पोर्ट सईद रगमहल है।

दो बजे वाली खबर से रग मे भग हो गया। लेकिन फिर भी उत्साह मे कोई कमी नही आयी। लगातार जहाज मे रह कर सब ऊब गये थे। इस लिए आतुर हो रहे थे कि कम से कम टहलने को तो मिलेगा।

दोपहर की चाय पी कर हम सब ऊपर आये। इतने में प्रथम श्रेणी का एक परिचारक आया। सब सूचनाएँ, विज्ञापन, जहाज़ के समाचार-पत्र वही लाता था। उस ने आते ही नक्शे की चौखट खोल दी। जहाज़ कहाँ तक पहुँचा है यह बताने के लिए नक्शे पर आलपिन खोस कर एक निशान लगा दिया जाता था। कल का लगा हुआ निशान उस ने निकाल लिया। उस के हाथ मे कागज का एक पुर्जा था जिस मे अक्षाश-रेखाश लिखे हुए थे। उस पुर्जे पर एक नजर डाल कर उस ने निशान आगे बढा दिया।

सब लोग वहाँ जमा हो गये। उन मे लगभग सभी यहूदी थे। मै पीछे की कुरसी पर बैठा था। मेरा विचार था कि भीड छँटने के बाद देखूँगा। काइटेल ने निशान से ले कर पोर्ट-सईद तक के फासले का हिसाब लगाया और मुड कर बोला, "लगभग १७५ मील। यानी पोर्ट सईद पहुँचते-पहुँचते बारह-एक तो हो ही जायेंगे।"

धीरे-धीरे भीड छँट गयी। काइटेल अभी तक वही खडा था और नक्शे की तरफ गौर से देख रहा था। मै उठ कर उस के पीछे खडा हो गया। उस के हाथ मे पेन्सिल थी जिसे वह नक्शे पर अकित चारो भूमि-खण्डो पर घुमा रहा था। जलमार्ग, वायुमार्ग, रास्ते के बन्दरगाह, देश-देश के पहाड, नदियाँ, सब वह देख रहा था।

हर रोज अकसर मै उसे वहाँ देखता। मै ने उस से पूछा, "क्या देख रहे है आप?"

वह चौक गया। मेरी तरफ मुड कर बोला, "देख रहा हूँ कि हम किस रास्ते से जायेंगे।"

मै ने कहा, "आप तो अफ्रीका के बन्दरगाह देख रहे है, अरब की नदियाँ देख रहे है, हिन्दुस्तान के शहर, चीन के पहाड, रेल के रास्ते सब कुछ बडे गौर से देख रहे है। मेरा खयाल है कि यह तो हम लोगो के सफर का रास्ता नही है।"

"बिलकुल सच," उस ने हँसते हुए कहा, "लेकिन मै ने युरोप की तरफ पेन्सिल नही घुमायी। आप ने देखा होगा। हर रोज मै यहाँ खडा रहता हूँ। हम मे से बहुत से लोग इसी तरह देखते रहते है। हर नया देश, हर नया बन्दरगाह, हर नया शहर। नाम पढता हूँ और मन मे विचार आता है—यहाँ जा सकूँगा? रोटी कमा सकूँगा? घर बसा सकूँगा?"

मुझे डर लगा कि फिर बातचीत का रुख उस की हर रोज की कहानी की ओर मुड जायेगा। इस लिए मै ने कहा, "लेकिन यहाँ खडे रह कर आप को अब जरूर लगता होगा कि दुनिया कितनी बडी है। एक देश छोडना पडा तो इस का मतलब यह नही कि स्वाधीनता खो गयी। कही भी रह सकते हैं, कैसे भी जी सकते है।"

बातें करते-करते हम कुरसियो पर बैठ गये। मार्था की माँ पास ही थी। मैं ने हँसते हुए उस से पूछा, "आप ने देखा यह नक्शा ? किस देश मे रहना पसन्द करेंगी आप ?"

काइटेल ने भाषान्तर कर के उस से कहा तब उस ने जर्मन मे उत्तर दिया, "मेरी पसन्द का क्या सवाल है ? जहाँ रहने देंगे, वहाँ रहेंगे।"

मै ने कहा, "आप ऐसा क्यो कहती है ? ये रग देख लीजिए। कितने अलग-अलग प्रकार के हैं। नये-नये देश, नये-नये राज्य। इन मे नाज़ी शासन का रंग कितना छोटा है। आप कही भी रह सकेगी। जर्मनी से भी सुन्दर, समृद्ध, एक से एक बढिया देश दुनिया मे है। आप बताइए तो सही, जहाँ कहेंगी वहाँ मैं आप को पहुँचा दूँगा। बताइए, कहाँ जाना चाहेंगी ?"

काइटेल हँसा और बोला, "जैसा आप कह रहे है, वैसा बिचार कभी-कभी मन मे आता है और फिर मैं सोच मे डूब जाता हूँ। एक के बाद एक परेशानियाँ आँखो के आगे आती है। होती तो छोटी ही है, लेकिन सब मुश्किल लगने लगता है। मान लो मिस्र मे रहना पडा तो ? वहाँ की धूप से डर लगता है। हिन्दुस्तान मे भी वही परेशानी। दिल्ली, लाहौर आदि शहरो के नाम मैं ने सुने है। पर कहते है कि वहाँ धूप बडी तल्ख होती है। किसी-किसी समय तो जिन्दा रह सकना भी मुश्किल हो जाता है।"

मै ने कहा, "धूप से भी कोई डरता है ! मेरी तरफ देखिए। मेरे गाँव मे गरमी के दिनो मे तापमान ११०° के ऊपर होता है। फिर भी मै जीवित हूँ।"

वह सहसा आश्चर्य व्यक्त करता हुआ बोल उठा, "हे क्राइस्ट ! छाँह मे भी ११०° ?"

वह स्त्री तो सचमुच सिहर उठी। काइटेल ने आगे कहा, "आज सुबह खलासियो मे बातें हो रही थी। लाल समुद्र मे धूप बडी तेज़ होती है। चारो तरफ रेगिस्तान। झुलसा देनेवाली लू बहती है। क्या यह सच है ?"

उस के चेहरे पर हवाइयाँ उड रही थी। मैं ने समझाते हुए कहा, "कुछ नही होता। आप ख्वामख्वाह डरते है। क्या अफ्रीका मे युरोपियन लोगो की बस्तियाँ नही है ?"

उस ने उत्तर दिया, "आप का कहना ठीक है। लेकिन एक से दूसरी,

दूसरी से तीसरी मुश्किल पैदा हो जाती है। आदमी जवान हो तो उतनी चिन्ता नही रहती। लेकिन यह बुढिया, हॅर्टा की माँ, ये सब जिन्दा रह सकेंगी उस धूप में ? मेरे मन मे एक विचार आता है। हम लोग पोर्ट सईद या एडन उतर जायें तो ? पर मेरे पास जो कपडे हैं वे सर्दियो में पहनने के हैं। धूप मे रहना हो तो नये कपडे चाहिए। पैसे कहाँ से लायेंगे ?"

आँखो के आगे कई तसवीरें घूम गयी। सच, इन के उतरने, रहने का मतलब गुलछर्रे उडाते घूमना नही है। ज़िन्दगी-भर रहना, हाथ-पाँव मारना और गरीबी मे जीना !

फिर भी दिलासा देते हुए मै ने कहा, "आप बेकार डरते हैं। सब जगह धूप थोडे ही होती है ?"

उस ने कहा, "मै जानता हूँ। इसी लिए गाँव देखता हूँ। आसपास पहाड, नदियाँ कहाँ है यह देखता हूँ। अन्दाजा लगाने की कोशिश करता हूँ कि वहाँ की हवा कैसी होगी। शाघाई जा रहा हूँ न ! वहाँ का पूरा भूगोल अब मुझे याद हो गया है।"

मार्था आयी थी। वह और उस की माँ, दोनो मे झगडा चल रहा था। वह मदनानी के साथ पोर्ट सईद उतरना चाहती थी। वहाँ से वे दोनो मोटर से काहिरा हो कर सुवेज में फिर जहाज पर सवार होने वाले थे। बुढिया नही मान रही थी। आखिरकार मार्था ने तुनक कर कहा, "मै जा कर रहूँगी।" और वह चल दी।

मै उठ खडा हुआ। मै ने काइटेल से पूछा, "आज रात पोर्ट सईद देखने आप उतरेंगे न ?"

उस ने कहा, "अब तक तय नही किया।"

मै ने एकदम कहा, "यह कैसे हो सकता है ? पैलेस्टाइन यहाँ से नज़दीक ही है। असल मे यहाँ उतर कर कुछ दिन रह कर आप को पैलेस्टाइन देखना चाहिए।"

पैलेस्टाइन का नाम सुन कर मार्था की माँ ने गर्दन ऊपर उठायी। काइटेल ने मेरी बात का अर्थ उसे बताया तो वह बोली, "अभी आप ने पूछा था न कि मै कहाँ रहना चाहती हूँ। हर बात से जो उचाट हो गया है। एक ही इच्छा

बाकी है। सब कुछ छोड दूँ, पैलेस्टाइन को पवित्र धरती पर मरूँ और वही दफना दी जाऊँ।"

कई बार मुझे लुई पर हँसी आती है। बडा नटखट तो वह था ही, लेकिन उस की शरारतें बडी अजीब हुआ करती। उम्र मे बडा होता तो वे और भी मजेदार लगती। मालूम होता था कि जान-बूझ कर उपहास कर रहा है। शिन्दे तो उसे युरॅपीय सभ्यता को मुँह बिचका कर चिढाने वाला होशियार विदूषक समझते। और सचमुच उस की कुछ शरारतो का इस तरह मतलब न निकालना भी मुश्किल ही था। "गुड मार्निंग, लुई!" कहते हुए हाथ मिलाने के लिए आगे बढाया जाये तो उसे स्वीकार न कर वह नाज़ी सलाम करता, हाथ ऊपर उठाता। लेकिन उस का अभिनय इस प्रकार का होता जैसे किसी को तमाचा मारने जा रहा हो। स्वागत का और एक ढग युरॅप मे प्रचलित है। मिलते ही मुसकराना। कई बार तो यह मुसकराहट इतनी बनावटी होती है कि लगता है, कही यह खिझाने के लिए तो नही है? लेकिन हँसना और फिर गम्भीर बन जाना एक रिवाज़ बन गया है। बेचारी लुई की माँ मिलते ही इसी तरह मुसकराती। यह हज़रत उस समय जान-बूझ कर दाँत निकालते, फिर गम्भीर बन जाते और माँ की तरफ़ देखने लगते। पहले-पहले मैं समझ नही पाया था। लेकिन बाद मे इस का अर्थ मैं समझ गया। उस की माँ का चेहरा सामान्यतया मधुर और हँसमुख दिखाई देता। लेकिन इस कृत्रिम स्वागत का मुसकराहट बहुत कुरूप होती। शायद इसी लिए उस बालक के मन पर उस का सदा के लिए गहरा प्रभाव पडा होगा। फिर भी ऐसी कुरूप हँसी हँसना उस के खूबसूरत चेहरे के लिए प्रयत्न करके भी सम्भव नही था! उस रात नाच था। मण्डल के साथ उस की माँ जी भर कर नाची। सब यहूदी खुशी की घडियाँ जीते वक्त मन से चाहते कि वे और ज्यादा लम्बी हो जायें। उस के मन मे मण्डल के लिए कृतज्ञता का गहरा भाव उत्पन्न हुआ। नाच समाप्त होने के बाद विदा लेते हुए उस ने मण्डल को हृदय से बहुत-बहुत धन्यवाद दिये। मण्डल का मन भी पिघल गया। "प्लेजर" कह कर उस ने उदारता से झुक कर उस का हाथ अपने हाथ में लिया और मुँह के

पास ला कर चूमा। लुई गोद मे था। उसे भी 'गुड नाइट' कह कर मण्डल ने उस से हाथ मिलाना चाहा लेकिन इन हज़रत ने बडी शराफत से उस का हाथ लिया और जोर से काट खाया। मै ठीक-ठीक नही समझ पा रहा था कि उस ने इस तरह उस चुम्बन का प्रतिदान दिया या कि पराई स्त्री के हाथ का चुम्बन लेने की प्रथा का वह कडा प्रतिवाद था अथवा उस की माँ की मजबूरी का नाजायज फायदा उठाया गया था, इस विचार के कारण लुई ने बदला लिया था। लेकिन शिन्दे पीछे थे, उन्हे बहुत हँसी आयी और वे खुश हो गये। उन्होने प्यार से उसे एकदम गोद मे ले लिया और मुझ से कहा, "जरा सँभल कर रहिए। औरतो से छेडखानी करनेवालो पर इस नन्हे-से यहूदी को भी गुस्सा आता है।"

मै ने हँस कर कहा, "आता होगा, मुझे क्या ?"

"याद रखिए, मेरी नजर आप के ऊपर है।"

मै बोला, "मै भी आप के ऊपर नजर रखे हूँ।"

"मतलब"

"याद है न उस दिन की ? गुड ब्वाय, बैटर मम्मी ! लुई का बहाना और माँ से दोस्ती !"

शिन्दे जोर से हँस पडे और बोले, "उस की चिन्ता न कीजिए। लुई अपनी माँ का अच्छा पहरेदार है। मै ने थोडी-सी भी ज्यादती की तो मुझे जोर से काटेगा। क्यो लुई ?"

लुई ने गर्दन हिलायी। उस के सिर के बीचो-बीच घुँघराले बालो की एक लट थी, जो थरथरा उठी। विशुद्ध जर्मन में हामी भर कर वह बोला, "या !" शिन्दे ने उसे गुदगुदाते हुए कहा, "पट्ठे ने एक भी शब्द अँगरेजी का न बोलने की कसम खा रखी है। लुई यस कहो, से यस !" लेकिन लुई अब सब समझ गया था। अँगरेजी टालना उस के नटखटपन का ही एक हिस्सा बन चुका था। उस ने यस कहने से इनकार कर दिया। शिन्दे ने प्यार से उस के गाल पर चिकोटी काटते हुए कहा, "तू ठहर, शैतान ! आज तुझ से अँगरेजी बुलवा कर ही रहूँगा !"

बाद में वे उसे ले कर पियानो के पास गये। उसे गोद मे बिठा कर पियानो खोला और बजाना शुरू किया।

कुछ ही देर मे उन मधुर स्वरो ने युगलो को आकर्षित कर लिया। नाच शुरू हुआ। लय तेज होने लगी, लुई मारे खुशी के तालियाँ बजाने लगा। मै ने उसे अपनी गोद मे उठा लिया। उस का एक हाथ अपने हाथ में ले कर दूसरे से उसे सीने से लगाया और नाच मे शामिल हो गया।

नाच की गति तीव्र हुई। शिन्दे भी जोश मे आ गये। लुई के मन की दबी आनन्द की धाराएँ खुल कर वहने लगी। वह हर्ष से किलकारियाँ भरने लगा। मानो वह सब के मन की चरम सुख की भावना का उद्गार था।

पियानो थम गया। लुई को मै ने उतार दिया। वह दौडता हुआ शिन्दे के पास गया। फिर से पियानो बजाने का अनुरोध करने लगा। शिन्दे ने उस से पूछा, "लुई, मै पियानो बजाऊँ ?"

उस ने खुशी से गर्दन हिलायी और बोला, "या ! या !" शिन्दे ने एक अँगुली पियानो पर रखी। कहा, "'या' नही, अँगरेजी मे 'हाँ' कहो 'हाँ'। 'यस' कहो।"

उस ने एकदम कहा, "यस, यस !"

एक दो बार अँगुलियाँ चला कर वे फिर रुक गये और बोले, "और बजाऊँ ?"

"या !" और उन की आँखो मे निषेध को लक्ष्य कर तुरन्त बोला, "यस !"

"तो कहो—अकल, प्ले पियानो !"

हर कीमत अदा करने को तैयार हो कर वह बोला, "अकल, प्ले पियानो।"

शिन्दे जीत गये थे ! उस के विरोध की सभी भावनाओ को पीछे धकेलते हुए उन्होंने कहा, "कहो—आई लाइक पियानो !"

"आई लाइक पियानो !"

"आई लाइक इगलिग !"

"आई लाइक इगलिग !"

"वेरी मच !"

"वेरी मच !"

उस की दीनता से शिन्दे का मन पिघल आया। उसे अपने पास ले कर उन्होंने एकदम प्यार-भरी आवाज मे कहा, "आह, बेबी, आई लाइक यू !"

लेकिन लुई समझ नही पाया। उस ने भी शिन्दे से कहा, "बेबी, आई लाइक यू !"

सगीत के आकर्षण मे जैसे वह सुधबुध खो बैठा था। अभिमान, हठ, डॉइश के लिए उस का आत्मीयतापूर्ण आग्रह सभी वृत्तियाँ एक एक कर गल गयी। सब को हँसी आयी। शिन्दे ने उसे ऊपर उठा कर गोद में लिया। मुझ से कहा, "अब कल सुबह तक इसे अँगरेजी का प्रोफेसर बना कर ही छोडूँगा।"

मै ने कहा, "सुबह तक ? यानी आप पोर्ट सईद नही जायेंगे ?"

"यह कैसे हो सकता है ? जाऊँगा और जरूर जाऊँगा। इसे भी साथ ले जाऊँगा ! क्यो लुई ? कहो, यस !"

उस ने प्रसन्नतापूर्वक सहमति प्रकट की।

मेरे कन्धे को पीछे से किसी ने छुआ। मै ने मुड कर देखा। हॅर्टा खडी थी।

उस का पहनावा देख कर मुझे ताज्जुब हुआ। बाल अच्छी तरह सहेजे हुए थे। माथे पर फूलो का फीता बँधा था। पैरो तक महीन रेशमी गाउन। कन्धे, पीठ, गला और छाती तक अग खुला हुआ। कन्धे के ऊपर से काली फर ओढ रखी थी। छाती के पास आलपीन से एक छोटा-सा फूल लगाया था। वह थर-थरा रहा था।

उस के साथ मन्नान था। उस ने रात के खाने का सूट पहन रखा था। लगता था दोनो नाच के लिए तैयार हो कर आये है।

उस ने सिर्फ मेरी तरफ देखा। आँखो मे रूप का अभिमान था। मुझ से बोली, "मै आप से कुछ पूछना चाहती हूँ। क्या हो सकता है वह, बताइए !"

मन्नान के माथे पर बल पड गये। हॅर्टा की मेरे साथ घनिष्ठता उसे पसन्द नही थी। मै ने जान-बूझ कर कहा, "अगर तुम यह पूछने आयी हो कि मै तुम्हारे साथ नाचूँगा या नही तो तुम्हारा यह सवाल बेकार है। क्योकि मुझे नाचना नही आता।"

उस ने मेरा हाथ पकडा और एक टेबुल के पास ले जा कर मुझे बिठा दिया। मन्नान भी बैठ गया। फिर मुझ से बोली, "यह नही पूछती। मै हर

किसी से एक ही सवाल पूछ रही हूँ। मिस्टर मन्नान से भी पूछा। आप से भी पूछती हूँ। बताइए, मै कैसी लग रही हूँ ?"

मै ने उस की तरफ देखते हुए कहा, "जैसे आप के खोये हुए कपडे वापस मिल गये हो।"

वह सहसा गम्भीर हो गयी। मन्नान मेरी तरफ मुड कर बोला, "आप फ़ाउलाइन का अपमान करने के मूड मे है।"

मै कुरसी पर से उठ खडा हुआ। मै ने दोनो से कहा, "माफ कीजिए। फ़ाउलाइन का अपमान करने की बात मै सोच भी नही सकता। आप के कपडे खो गये थे। मुझे खुशी हुई कि वापस मिल गये। उस खुशी को मै ने प्रकट किया। बस।" इतना कह कर मै मुडा और गुडनाइट कह कर पानगृह के बाहर चला गया।

मै डेक पर खडा था। पोर्ट सईद पास आ रहा था। सागर छोटा बन कर धरती की गोद मे घुसता जा रहा था। देखते ही देखते उस के शरीर पर दीप-मालिकाओ के रोमाच खडे हो गये। थोडी ही देर मे पोर्ट सईद का बन्दरगाह तैरता हुआ जहाज के पास आ गया।

हॅर्टा पास आ कर खडी हो गयी थी। वह बोली, "तुम्हे एक बात बताना चाहती हूँ, बॉब।"

उस की तरफ न देखते हुए मै ने पूछा, "क्या ?"

"ठहरो, देखती हूँ कि कोई सुन तो नही रहा।" इतना कह कर उस ने चारो तरफ देखा। बाद मे गम्भीरता से मेरा हाथ थाम लिया और बिलकुल धीमे स्वर में कहा, "बताती हूँ। लेकिन तुम किसी से नही कहोगे।"

"शायद नही।"

"बॉब, किसी से न कहना। तुम मुझे बिलकुल अच्छे नही लगते।"

मै ने उस से कहा, "किसी से नही कहूँगा, लेकिन एक व्यक्ति से कहने की बडी इच्छा है।"

"किस से ?"

"मि० मन्नान् से।"

उस ने घूर कर मेरी तरफ देखा। मेरे कन्धे पकड लिये। हलके से चूमा और बोली, "अब मुझे कितना अच्छा लगता है! तुम जलने लगे हो न? तुम्हे खूब सताना चाहती हूँ। अभी-अभी मै डेक पर तुम्हारी राह देख रही थी। तुम नही ही आये न?"

उसे अलग करते हुए मै ने कहा, "झूठ! मै ऊपर हो आया। तुम्हे बहुत ढूँढता रहा। तुम डेक पर नही थी।"

"खाना खाने के बाद दो घण्टे उस सामने के खम्भे के पास मै खडी रही।"

"हो सकता है! लेकिन अँधेरे मे कोई कैसे पहचाने? माथे पर दीपगृह-जैसा प्रकाश रख लिया होता!"

वह कुछ दूर सरक गयी। बाहर देखने लगी। बाद मे बोली, "अपनो को पहचानने के लिए क्या चेहरा दिखाई देना जरूरी होता है? जो अच्छा लगता है उस के शरीर की, मामूली चलने-फिरने तक की हर रेखा मन में जीवन्त होती है। अब यहाँ भी कितना अँधेरा है। फिर भी मै ठीक तुम्हारे पास कैसे चली आयी? मै तुम्हे अच्छी ही नही लगती!"

पाइप बुझा कर मै ने जेब मे रखा और कहा, "बिलकुल अच्छी नही लगती।" और उसे पास खीच लिया।

थोडी देर के बाद वह बोली, "मै ने मिस्टर मन्नान से पूछा, 'मै कैसी लग रही हूँ?" उस ने कहा, 'बहुत ही खूबसूरत!' बताओ, तुम्हें कैसी लग रही हूँ?"

मै ने सहज भाव से कहा, "कुछ खास नही। इनसान की तरह दिखाई देती हो, जैसे दूसरे लोग दिखाई देते है।"

उस का चेहरा एकदम उत्तेजित हो आया। मुझे पकड कर उस ने कहा, "बॉब, तुम जरूर दूसरे के मन की बात जान लेने में सिद्धहस्त हो। मुझे भी यही लगता है! मै इनसान बन गयी हूँ। चार-पाँच साल से भूली हुई थी। लगता था मै क्षुद्र से क्षुद्र प्राणी से भी गयी-बीती हूँ। लेकिन जहाज पर कदम रखते ही खुली हवा में साँस लेने लगी। विश्वास नही होता था। यहाँ सब पहचानते है, हाल पूछते है, मुझ से बातें करते हैं, मेरे साथ हँसते है, खिलखिलाते है। तुम

मुझे चाहते हो, मेरी देख-भाल करते हो! अब कहो, मैं इनसान, जिन्दा इनसान बन गयी हूँ न।"

मै चकित हुआ। उस का आवेश बढता जा रहा था। मेरे कन्धे पर उस ने गरदन टिका दी और बोलती रही, "आज मेरा सामान मिला। मेरे कपडे मिले। अब हम पोर्ट सईद उतरेंगे। सुख के सभी साधन अब हस्तगत हो गये है। मै सुख पाने के लिए तैयार हो गयी हूँ। हम उतरेंगे। खूब घूमेंगे, दौडेंगे, खेलेंगे। क्या-क्या करना है उस की सूची मुझे याद है। कैफे में ड्रिंक लेंगे। थिएटर मे खेल देखेंगे। कैबरेज मे जा कर नाचेंगे। मस्ती में आने के बाद रात की सुनसान सडको पर दौडते जायेंगे। सागर के किनारे जायेंगे। मै तुम्हारे पास खडी रहूँगी। लेसेप्स के पुतले की तरह अंगुली सामने उठा कर कहूँगी—बॉब, यह सुवेज की नहर, पूरब का दरवाजा। जर्मनी पीछे छूट गया। युरॅप पीछे छूट गया। अत्याचार, द्वेष, प्रतिशोध के सहारे जीनेवाली, जीत की उम्मीद रखनेवाली सस्कृति पीछे रह गयी। अब मै नये खण्ड मे जा रही हूँ। यह पूरब। इधर हमारी खुशियो का सूरज फिर निकलेगा।"

मै ने उसे सॅभाल लिया। जहाज रुक गया था। छोटी-छोटी नावें आ कर जहाज से चिपक गयी थी। उस मे माल बेचने वाले इजिप्शियन व्यापारियो का हो-हल्ला जारी था।

हम बाहर जाने को निकले। मै ने हेर्टा से कहा, "मन्नान को बुरा लगेगा। तुम लौंच से उस के साथ किनारे जाओ। मै वही तुम्हारी राह देखूँगा।"

पोर्ट सईद कोई पक्का बन्दरगाह नही है। जहाज दूर खडा रहता है और मोटर-लौंच से किनारे तक जाना पडता है। फिर वैसे ही वापस आना पडता है।

सब तैयार हो गये थे। काइटेल भी खडा था। मै ने पूछा, "आप तो जाने वाले नही थे न?"

उस ने हँस कर उत्तर दिया, "मै ने पूछ-ताछ की तो पता चला कि मोटर-लौंच का किराया नही देना पडता। मुफ्त मे ले जाते हैं, मुफ्त मे ले आते हैं।

अब कोई दिक्कत नही रही ।"

सभी जर्मन जल्दी मे थे । उतरने के लिए उत्सुक । शिन्दे ने लुई को गोद मे लिया । वह नेवी-ब्लू की महीन पोशाक पहने था । लुई की माँ यहूदियो के साथ थी । हॅर्टा भी उन मे थी । मन्नान भी था ।

जहाज़ पर बेहद उमस थी । मै ऊपर के डेक पर आया । वहाँ एकदम बडी तरावट महसूस हुई । मै ने लुई की माँ से कहा, "देर हो जायेगी । पहले ही बहुत सर्दी है । लुई के लिए ओढने को कुछ साथ ले लीजिए । हम जीने से नीचे जा रहे है । आप जल्दी आयें तो पहली ही लौंच मे जगह पाने की कोशिश करेंगे ।"

पहली श्रेणी के डेक पर भीड की कोई हद न थी । वर्दी से लैस अफसर । तुर्की टोपियाँ पहने कस्टम के अधिकारी । पासपोर्ट के अधिकारी । सभी यात्रियो के अपने-अपने ख़ास लिबास । नीचे जाने की सब को जल्दी । उतरने के लिए ज़ीना लगवाया गया था । हम कतार मे खडे रहे । हमारी वारी आयी । शिन्दे मेरे पीछे थे । मै ने पासपोर्ट दिखाया । उतरने की अनुमति का कार्ड मिला । जीने पर गया । शिन्दे ने पासपोर्ट दिखाया । अधिकारी ने लुई के बारे मे पूछ-ताछ की । शिन्दे ने कहा कि उस की माँ पीछे से आ रही है । मुझे लौंच मे जगह पानी है ।

वह भुनभुनाया । लेकिन शिन्दे को छुटकारा मिल गया । तख्तियो और रस्सियो की सीढी पर से सावधानी से उतरते हुए हम नीचे आये । पानी की सतह पर छोटी-छोटी तख्तियो का एक तैरता बेडा समुद्र मे बिछा दिया गया था । उस से सट कर लौंच खडी थी । हाथ ऐंठ गया था इस लिए शिन्दे तुरन्त लौंच मे जा बैठे । लुई बहुत खुश था । शिन्दे ने कोनेवाली जगह हथिया ली और उसे नीचे उतार दिया । मुसाफिरो की कतार ज़ीने पर से उतर रही थी । मोटर-लौंच भरने को आयी । लुई की माँ नजर नही आ रही थी । छोटे-से तख्ते पर भीड हो गयी । लौंच भर गयी थी । शिन्दे चिन्ता से ऊपर देख रहे थे । वापस जाने के लिए जगह नही थी । मै ने जोर से चिल्ला कर कहा, "चिन्ता न कीजिए । आप आगे जाइए । मै उसे ले कर आता हूँ ।"

लौंच रवाना हो गयी ।

चलिए मेरे साथ। ऐसा नही हो सकता।"

उस का हाथ हाथ मे ले कर मै ज़ीने के पास जा पहुँचा। वही अफसर। वही प्रश्नोत्तर। "पासपोर्ट ?" मै ने पुस्तक आगे बढायी। उस ने ऊपर के सुनहरे अक्षर देखे और कहा, "ब्रिटिश ? यू आर ऑलराइट, सर!" फिर उस की तरफ देख कर उस ने पूछा, "ब्रिटिश पासपोर्ट, मैडम ?"

वह डर गयी थी। उस का हाथ थरथरा रहा था। मै ने कहा, "आई थिंक इट्स जर्मन।"

उस के तेवर बदल गये। पासपोर्ट की पुस्तक खोल कर देखी और लौटाते हुए उस ने कहा, "मुझे यही शक था। माफ कीजिए। इस किनारे पर आप पाँव नही रख सकती।"

मै देखता रह गया। उसे पासपोर्ट वापस लेने की भी होश नही थी। सिर्फ घबरा कर देखती रही, कभी उस की तरफ कभी मेरी तरफ। जो उस समय वहाँ घट गया था उस का ठीक-ठीक अर्थ वह नही समझ पा रही थी। आखिर पास के एक परिचारक ने अदब से उस की कुहनी छू कर कहा, "प्लीज़ मैडम, दिस वे!" और उसे दरवाजे से एक तरफ हटा दिया।

मै ने उस अफसर को समझाने को कोशिश की। यह भी बताया कि उस का छोटा बच्चा आगे जा चुका है। लेकिन उस का एक ही उत्तर–"आई ऐम सॉरी, सर! जर्मन ज्यूज़ आर नॉट एलाउड ऑन दीज शोर्स!" मै ने उसे अपने साथ वापस लाने का वादा भी किया। लेकिन वह टस से मस नही हुआ। वही जवाब। शिष्ट किन्तु दृढ—"माई ऑर्डर्स आर स्ट्रिक्ट! आई ऐम सॉरी!"

डेक पर ही रेलिंग के पास एक तरफ मै खडा रहा। लुई की माँ के साथ बात करते नही बनता था। खीझ और आवेश से मन सुन्न हो रहा था। पाइप निकाला और जला कर बाहर देखने लगा।

दूसरी तरफ डेक पर थोडी भीड थी। कुछ गोरे स्त्री-पुरुष। बीच मे ऊँची टोपी पहने एक अरब खडा कहकहे लगा रहा था। बात-चीत के कुछ टुकडे बीच-बीच मे सुनाई पड जाते।

किसी ने पूछा, "लेकिन हम ने अपराध क्या किया है ? बन्दरगाह हो आने भर के लिए भी हमे मनाही ?"

उस अरब ने पूछा, "लेकिन आप लोग जहाज़ पर वापस आ जायेंगे इस बात की जिम्मेदारी कौन ले ?"

"आखिर हम जायेंगे कहाँ ?"

"आप लोगो का क्या भरोसा ? शरणार्थी जो ठहरे ! कही भी जा सकते है। जिस के घर मे सहारा मिलेगा वही रह सकते है। और पैलेस्टाइन चले गये तो ?"

सब स्तब्ध हो गये। बीच मे ही किसी ने उत्तेजित स्वर मे कहा, "पैलेस्टाइन पराया घर थोडे ही है ! वह हम यहूदियो की ही धरती है !"

उस अरब ने व्यग्य से हँस कर कन्धे हिलाये और कहा, "सच ? मुझे मालूम नही था। मै समझ रहा था कि पैलेस्टाइन आज हम अरबो का ही है !"

कोई कैसे कहे कि किस की समझ सही है ? इतिहास कहता है कि रोमनो के आने से पहले, मुसलमानो से पहले पैलेस्टाइन यहूदियो का था। लेकिन इतिहास बहुरूपिया है। कोई भी देश उस की गवाही के जोर पर न रहे।

हॅर्टा कहाँ है ?

उस के चेहरे पर भोगे हुए दुःख की अनेक गवाहियाँ थी। अभी-अभी सोच रही थी कि जर्मनी से छुटकारा मिला, स्वाधीनता मिली तो अब यह आघात ! मुझे चिन्ता होने लगी। उस का धीरज टूट जायेगा। शायद मन का सन्तुलन भी बिगड जाये। दबा कर रखे गये विचारो का विस्फोट होते ही मनुष्य असहिष्णु बन जाता है। मै लगातार उसे ढूँढ रहा था।

सब मिले। चेहरे उदास थे। लेकिन एक विचित्र भाव था उन पर, जैसा किसी प्रत्याशित घटना के घट जाने का होता है। लुई की माँ को चिन्ता थी सिर्फ अपने बच्चे की। हरमान तो अपनी बीवी का मजाक उडा रहा था। उस ने मुझ से कहा, "देख रहे थे न आप, कैसी बन-ठन कर गयी थी ? इतनी रात गये पोर्ट सईद मे कौन इस की तरफ देखने वाला था ?"

उस की बीवी ने खीझ कर जवाब दिया, "मुझे खत डालने जाना था बन्दरगाह।"

वह बोला, "खत डालने के लिए जहाज़ पर लेटरबॉक्स है ।"

काइटेल मुझे देख कर हँसा । बोला, "ज्यादा दु ख इस बात का है कि ख्वामख्वाह नीद खराब हुई ।"

डेक पर मैंने हॅर्टा को ढूँढ निकाला। दूर से आवाज़ दी तो वह एक दम घूम गयी और जैसे ही मै उस के निकट पहुँचा, मेरे सहारे टिक कर विषाद-भरी दृष्टि से मेरी ओर देखने लगी । जो लग रहा है, वह सत्य है, आभास नही इस का निश्चय हो जाने पर असहायता से बोली, "बॉब !" और मुँह फेर लिया ।

उस के होठ भिचे हुए थे । हाथ स्वस्तिक जैसे छाती पर । वह छाती दबा रखने की कोशिश कर रही थी । थोडी देर के बाद बोली, "क्यो आये ? कोई ध्यान देता है तो एहसास हो जाता है कि मै इनसान हूँ । लेकिन किस लिए ? फिर रौंदे ही जाने के लिए न ?"

मैंने उस के हाथ छुडा दिये । फिर उन्हे अपने हाथो मे ले कर कहा, "हॅर्टा, मै कुछ बोल नही पाता ।"

थोडी-सी रोशनी था । उस के हाथ पर खून की बूँदे नजर आयी । मैं ने चौक कर कहा, "यह क्या ?" उस ने भी देख कर जैसे अपने-आप से कहा, "शायद बहुत जोर से काटा मै ने ।"

हताश क्रोध के आवेश मे उस ने अपना हाथ काट लिया था, उस की वे निशानियाँ थी । उन की तरफ अँगुली से इशारा करते हुए मै ने गुस्से से कहा, "तुम पागल तो नही हो गयी, हॅर्टा ?"

उस ने रूमाल निकाला । खून पोछा और मुझ से कहा, "तुम से एक ही प्रार्थना है बॉब ! जो हुआ उस के बारे में हम एक शब्द भी नही बोलेंगे ।"

उस ने अपने विषय मे, जर्मनी मे बीते हुए अपने जीवन के विषय मे शायद ही मुझ से कभी कुछ कहा था । भीतर ही भातर दु ख उसे सालता रहता । लेकिन अपने दु ख का प्रदर्शन करने में वह दीनता का अनुभव करती थी ।

लेकिन गहरा धँसा हुआ काँटा गरम तेल की बूँदो से उभर कर ऊपर आने लगता है । मेरे स्नेह की गरमाहट से उस रात उस के मन के दु खो को वाणी मिली ।

हम दोनो डेक पर खडे थे । मै विचारो में डूबा हुआ था । उस ने पूछा,

"क्या सोच रहे हो ?"

विचारो की शृंखला टूट-सी गयी । मै ने पूछा, "हॅर्टा, तुम ने कभी हिटलर को देखा है ? तुम्हे वह अच्छा लगता है ?"

वह चौक गयी । लेकिन उस ने देखा, मेरा उद्देश्य उस का दिल दुखाना नही था। मेरे मन की सम्भ्रान्त स्थिति की धुँधली-सी कल्पना उस ने की होगी । उस ने उत्तर दिया , "जी हाँ, बहुत अच्छा लगता है । कभी मिला तो उसे चूमना चाहती हूँ ।"

मै ने देखा । दबाया हुआ क्रोध, नजरो मे द्वेष का जहर, अपनी असहायता की चिढ ! उस स्वर मे इन सब विकारो की धार थी । मेरे मन मे विचार आया, चूमने का मौका मिला तो प्रतिशोध के सन्तोष के लिए इस खूबसूरत लडकी को विषकन्या बनते हुए ज़रा भी हिचकिचाहट नही होगी ।

वह एक अँगुली मे अँगूठी पहने थी। स्वर्ण की तो निश्चित नही। लेकिन प्लैटिनम की भी नही थी । इस बात का भी विश्वास नही होता था कि किसी निम्न कोटि के धातु की अँगूठी वह पहनेगी । मै ने हाथ पलट कर देखा ।

उस ने पूछा, "क्या देख रहे हो ?" मै ने कहा, "कुछ पूछना चाहता था । लेकिन शिष्टता का तकाज़ा है कि निजी बातें पूछनी नही चाहिए ।"

उस ने उत्तर दिया, "जरूर, हमारे सम्बन्ध शिष्टता तक ही तो सीमित है !"

मै ने कहा, "इस अँगूठी के बारे मे सोच रहा था ।"

उस ने हाथ छुडा लिया । अँगूठी की तरफ देखा । उसे अँगुली पर घुमाया और बोली, "तुम ने पूछा तो नही, फिर भी मै बताती हूँ । जानते हो, यह अँगूठी किस ने दी है ?"

मै ने गरदन हिलायी और कहा, "जानने की इच्छा भी नही है ।"

वह हँस कर बोली, "थैंक्स ! तुम सचमुच अच्छे आदमी हो । तुम नही चाहते, लेकिन सुनाने से मुझे सन्तोष मिलेगा । सुनोगे ?"

मै ने फिर उस का हाथ अपने हाथ मे ले लिया और कहा, "सुनाओ !"

अँगूठी उतार कर उस ने हाथ मे ले ली थी। ऊपर की मुहर दिखाती हुई बोली, "ये अक्षर देखो। के और एफ। कार्ल फ्राझ नाम के। तुम नाराज तो नही हो जाओगे ? नाराज न होना, बॉब ! आज मै तुम्हारी प्रेयसी हूँ। जर्मनी छोडते समय यह मेरा प्रेमी था। भले ही हम स्त्रियाँ नासमझ हो, लेकिन अपने प्रेम का दान तो सोच-समझ कर ही करती है। मै ने कार्ल को चुना। हम ने एक-दूसरे को वचन दिया था। उस की निशानी है यह अँगूठी। पायी, तब प्लैटिनम की थी। लेकिन जर्मनी से बाहर हम सोना नही ला सकते। मुझे देश-निकाला मिला। पैसे, गहने, यह अँगूठी सब कुछ छिन गया। उस डाके की निशानी के रूप मे मिली उसी ढग की यह मामूली धातु की अँगूठी। वही पहनती हूँ।"

अनजाने ही मै जैसे दूर हो गया। मुझे उस से प्रेम नही था न ? फिर फ्राझ का नाम सुन कर यह दूरी क्यो ?

शायद वह भी अनुभव कर रही थी। उस ने पास आने की बिलकुल कोशिश नही की। इतना-भर कहा, "तुम्हें सुनने मे कोई आपत्ति नही थी, इस लिए मै ने कहा। दिल खोल कर बातें करने के लिए मेरा कोई नही। मन जीवित है। उसे प्यास लगती है, भूख लगती है, कैसे सहूँ, कितना सहूँ ? नये अनुभव होते हैं। मन को झकझोरते है। कभी-कभी सोचती हूँ, यह क्या कर रही हूँ ? कभी फ्राझ मेरा सब कुछ था। अब तक उस की याद है। लेकिन आज कहती हूँ कि मै निश्शेष रूप से तुम्हारी हूँ। इस का भी कोई अर्थ है ?"

परिचित शब्दो की यह प्रतिध्वनि ! उमा के पत्र मे हिन्दुस्तान मे एक बार यह गूँजी थी। आज इतने वर्षो के बाद, दूसरे खण्ड मे, दूसरी नारी के मुँह से वही शब्द कल्पना के पर्दे पर टकराये, फिर गूँज उठे। पहली प्रीति का गला घोटने वाले नारी हृदय के विषय मे जीवन मे पहली बार सहानुभूति उत्पन्न हुई। मै ने देखा, वह रेलिंग पर झुक कर नीचे पानी मे देख रही थी। मै ने उसे अपनी बाँहो मे भर लिया।

मोटी रस्सियो के ढेर पडे थे। बाद में हम उन पर जा बैठे। उसे सिगरेट दी। मै ने पाइप जलाया। उस का मन भर आया था। अपनी कहानी सुनाना उस ने आरम्भ किया, वही कहानी अपने शब्दो मे मै आप को सुनाता हूँ।

चार

अगस्त का महीना आया। सब तरफ धूप पी कर मस्त लहलहाते खेत, चरागाह! कटाई के लिए उन पर हँसिया-गँडासो ने हमला बोल दिया। अफवाहे फैल रही थी कि कटाई का मौसम खत्म होते ही महायुद्ध शुरू होगा। जर्मनी के सत्ताधारियो ने अपने हथियार सान पर चढा दिये थे। मौत अपनी कटाई के मौसम का बेसब्री से इन्तज़ार कर रही थी।

मिलान एक्सप्रेस छूटने का वक्त हो गया। स्टेशन पर ज्यादा चहल-पहल नही थी। यात्री आते। चुपचाप गाडी मे चढते। प्लेटफार्म पर भीड नही थी। फेरीवालो का शोरगुल नही था। रेल के अफसर, पुलिस अफसर, नागरिक वेश में जासूस, सब हमेशा की तरह मौजूद थे। गाडी मे छुट्टी मनाने के लिए स्विट्ज़रलैण्ड और इटली जाने वाले रँगीले मुसाफिरो की भीड थी। सब फिर जर्मनी लौट आने वाले थे। आने वाले नही थे तो सिर्फ पन्द्रह-बीस मुसाफिर। उन्हे आज देश-निकाला दिया गया था। सब जर्मन-यहूदी थे। बहत्तर साल की हॅर्टा की माँ। उस के पाँव बडी मुश्किल से उठते थे। उसे साथ ले कर हॅर्टा डिब्बे मे चढी। बार-बार वह माँ को चूमती और सिर्फ "मुटी, मुटी!" ही कह पाती। डिब्बे मे पहले ही कुछ भीड थी। हॅर्टा ने कोशिश कर के ज़रा-सी कामचलाऊ जगह ढूँढ निकाली। थर्ड क्लास का डिब्बा था। लेकिन बैठते समय उस की गद्दी की तरफ देख कर माँ ने कहा, "यह हमारे लिए नही होगा।" हॅर्टा ने उसे बैठा दिया और सामान की व्यवस्था के लिए वह बाहर प्लेटफार्म पर चली गयी।

लेकिन सामान की अपेक्षा उस की नज़र अपने प्रेमी को ढूँढ रही थी। वह दिखाई नही दिया। फ्राझ जर्मन था। हॅर्टा यहूदी थी। फ्राझ का उसे विदा करने आना, उस के साथ अपने सम्बन्ध खुले आम प्रकट करना दण्ड को निमन्त्रण देना

था। लेकिन उसे आशा थी। इतने में एक पोर्टर ने एक चिट्ठी उसे दी और धीमे स्वर मे कहा, "हेर फ्राझ ने दी है।" उस ने वह चिट्ठी तुरन्त ब्लाउज मे छिपा ली। नजरो मे घबराहट दिखाई देने लगी। वह फिर डिब्बे की ओर मुडी ताकि किसी को शक न हो। डिब्बे के दरवाजे ही के पास एक अफसर ने उसे रोका। उस का चेहरा निर्विकार था। स्वर कडा।

"फ्राउलाईन!"

"क्या?"

आप के सामान की तलाशी अभी पूरी नही हुई। सामान आप को परसो नेपल्स मे जहाज पर मिलेगा।"

"लेकिन मेरे पास अपने शरीर के कपडो के अलावा कुछ नही है। माँ की सब दवाइयाँ भी सामान मे ही है।"

"मै कुछ नही कर सकता। सामान परसो नेपल्स मे मिलेगा।"

वह एक टक देख रहा था। उस की नजर से नजर मिलाने की हिम्मत हॅर्टा मे नही थी। "और फ्राउलाईन," उस ने आगे कहा, "आज रात जर्मन सरहद पार करते समय आप को भी तलाशी ली जायेगी। पैसे, सोना, गहने, कुछ भी आप जर्मनी के बाहर नही ले जा सकती। आप के पास कुछ हो तो पहले ही बता दो।"

उत्तर की प्रतीक्षा मे वह रुका। हॅर्टा कुछ नही बोली। वह मुडा कि इतने मे सादी पोशाक में एक आदमी उस के पास आया। उस ने नाजी ढंग का सलाम कर के कहा, "पाँच मिनिट पहले फ्राउलाईन को एक चिट्ठी मिली है, वह हमें चाहिए।"

हॅर्टा का हाथ अनजाने छाती की तरफ गया। मुँह से शब्द नही फूट रहे थे। दृष्टि शून्य हो गयी। उस अफसर ने फिर कहा, "आप को तकलीफ देने की इच्छा नही। लेकिन चिट्ठी दे देना आप के लिए ही अच्छा होगा!"

वह कुछ नही बोली। अफसर ने आगे कहा, "आप ने चुपचाप वह चिट्ठी हमारे हवाले नही की तो आप को यही रुकना पडेगा। आप की बुढिया माँ अकेली शाघाई तक जायेगी—तब तक जिन्दा रही तो!"

हॅर्टा ने चुपचाप चिट्ठी निकाल कर दे दी। देते हुए सिर्फ इतना बोली,

"मुझे एक बार पढने तो दीजिए !" अफसर उत्तर न दे कर चिट्ठी छीन ली और दोनो घूम कर चले गये ।

गाडी छूटने मे पाँच मिनिट बाकी थे । दो-तीन हिन्दुस्तानी विद्यार्थी जल्दी से आ कर गाडी मे चढे । उन का बहुत-सा सामान चढाया गया । हॅर्टा कुछ ईर्ष्या से उस सामान की तरफ देख रही थी । ठेले पर रखा सारा सामान खत्म होते ही वह चौक गयी । उस ठेले के दूसरी तरफ पुस्तको का छोटा-सा ठेला और था । वहाँ कार्ल खडा था, पुस्तकें देखने का बहाना करता हुआ । लेकिन उस की नजर हॅर्टा को ढूँढ रही थी ।

उसे देखते ही हॅर्टा जल्दी से उस की तरफ बढी । लेकिन उस ने मुँह फेर लिया । हॅर्टा रुक गयी । शायद वहाँ पारस्परिक परिचय को व्यक्त करने से वह डरता हो ! उस ने कुछ सोचा । फिर निश्चयपूर्वक वह आगे बढी । उसे पुकारा, "कार्ल !" कार्ल ने आश्चर्य से उस की तरफ देखा । बडी मुश्किल से वह आगे बोली, "कार्ल अब कोई चारा नही । तुम्हारी चिट्ठी गैस्टापो के जासूसो के हाथ पड गयी है ।"

कार्ल का चेहरा फक् हो गया । मुँह से शब्द नही फूट रहे थे । दोनो एक-दूसरे की तरफ देखते हुए खडे रह गये । आखिरी मुलाकात की अनमोल घड़ियाँ भी इस पागलपन मे खो गयी । गाडी छूट गयी थी । हॅर्टा विदा तक नही ले पायी और उसे गाडी मे सवार हो जाना पडा ।

सपने मे सब कुछ दिखाई देता है । लेकिन अपना चेहरा दिखाई नही देता । यादो के बारे मे भी ऐसा ही होता है । हॅर्टा को सब याद हो आता । लेकिन कार्ल का चेहरा आँखो के सामने न आता । उस की गहरी नीली आँखें बीच मे ही याद हो आती । छोटे-छोटे कटे सख्त बाल दिखाई देते । फौजी वर्दी का रुआब आँखो के सामने घूम जाता । लेकिन उस का चेहरा लाख कोशिशो के बावजूद सामने न आता ।

गाडी दौडती जा रही थी । हॅर्टा वही खडी थी । उस चिट्ठी मे क्या होगा ? पागलपन मे कोई ऐसी-वैसी बात तो नही लिख दी थी उस ने ? जब से यह

आदेश निकला था कि जर्मनो को यहूदियो से कोई सम्बन्ध नही रखना चाहिए, तब से फ्राझ उसे टालता रहता। पर मन का आकर्षण कम नही हुआ था। उस आदेश ने डेढ साल के उन के कोमल प्रेम का गला घोट दिया। उस चिट्ठी के कारण कार्ल को सज़ा दी जायेगी ? यदि उस ने लिखा हो—'कुछ भी हो, मैं तुम्हे नही छोड सकता। जर्मनी छोड दूँगा लेकिन ब्याह तुम से ही करूँगा।' तो क्या ? जेल ? या—उस के रोगटे खडे हो गये। दूसरो की कहानियाँ सुनी थी उस ने। गैस्टापो के अफसर कार्ल की भी हत्या करवायेंगे ?"

कल्पना इतनी स्वाभाविक, इतनी वास्तविक थी कि वह सहम गयी। उस का हाथ होठो के पास गया, मुँह से फूट निकलने वाली चीख़ को मुँह के अन्दर ही दबा देने के लिए। हाथ ठण्डा था लेकिन होठो को उस से कही ज्यादा ठण्डी अँगूठी लगी। उस ने देखा। प्रेम की सौगन्ध का वह स्मृति-चिह्न! उस पर कार्ल फ़्राझ के नाम की मुहर थी। मिली तब सोने की नही, बल्कि प्लैटिनम की थी। लेकिन जर्मन सरकार ने प्लैटिनम छीन लिया। किसी मिलावट की धातु की अँगूठी बदले मे उसे दे दी गयी। देने वाला अफसर व्यग्य से बोला था, "फ़्राउलाईन, हथियारो के लिए जर्मनी को आज हर तरह की धातु चाहिए। मिलावट की हो क्यो न हो, पर यह अँगूठी धातु की है। जर्मन सरकार आप के लिए यह स्वार्थत्याग कर रही है।"

कार्ल के सहवास मे उस की पहली प्रीति का जन्म हुआ था। कितनी लजीली, कितनी कोमल थी वह प्रीति! स्वय हॅर्टा की दीठ लगती थी उसे। साल्जबर्ग के जंगल में दोनो रविवार की पिकनिक पर गये थे। अँधेरा छाने लगा। जाडे का मौसम। हवा में मिश्रित सुवास की मस्ती भरी थी। मार्ग भूल कर दोनो भटकने लगे। थक गये। लेकिन रास्ता किसी भी तरह नही मिल रहा था। आखिर एक झरने के किनारे दोनो ने नाश्ते की चीज़ें निकाली। हॅर्टा ने केले के छिलके नीचे फेंक दिये। फ्राझ बोला, "फ्राउलाईन, जर्मनी मेरा प्रिय देश है। उस की धरती को इस तरह विद्रूप कर देना मुझे बिलकुल अच्छा नही लगता।"

हॅर्टा ने सक्षिप्त-सा उत्तर दिया, "मेरे पिता भी पिछले महायुद्ध मे जर्मनी के लिए लडते-लडते मारे गये है!"

कार्ल ने उस का हाथ पकड लिया और कहा, "माफ करना ! मै समझता था कि आप यहूदी है । लेकिन अब पता चला कि आप जर्मन भी है !"

नाश्ते के बाद दोनो फिर निकल पडे । नये जर्मनी के यश के, राइखवेर के गौरव के गीत गाते हुए दोनो फिर जंगल-जगल भटकने लगे । हाथो मे हाथ । कदम से कदम मिल रहे थे । रात आयी । रास्ता नही मिलता था । घास में कुछ रेंगने की-सी आवाज़ आयी । वह डर कर फ्राझ से लिपट गयी ।

फ्राझ ने उसे अपनी बाँहो में भर लिया । उसे चूमा । देखते-देखते हॅर्टा की आँखें भर आयी। उस के कम्पित मन को वह आलिगन अभेद्य कवच-जैसा लगा । फ्राझ के होठो ने उस के मन का सारा भय सोख लिया । उस क्षण उस ने अपने-आप को फ्राझ की अजलि मे समर्पित कर मुक्ति का अनुभव किया ।

हॅर्टा का विश्वास था कि स्त्री का प्रेम एक ही बार जन्म लेता है, एक ही बार मरता है । उस की निष्ठा ऐकान्तिक, अविचल होती है । प्रेम का यह बन्धन उत्पन्न हुआ और हॅर्टा का हर्ष आकाश छूने लगा । सारा विस्तीर्ण विश्व जैसे उस के मन के आँगन मे समा गया हो ! लेकिन कुछ क्षण पहले गाडी की सीटी चीखी और उस की कर्कशता से सारे बन्धन कटते चले गये । धमनी टूट जाती है तो उस से बहने वाली खून की धारा प्राण ले कर ही रुकती है । हॅर्टा की सवेदना ज़ड हो गयी ।

अँधेरा छाने लगा । खाने का वक्त हो रहा था । परिचारक सब डिब्बो में 'खाना तैयार है' की आवाज लगाता हुआ गुज़र गया । आखिरी डिब्बे के पास पहुँचा तो इधर के सण्डास के पास दूसरा परिचारक खडा था । उस ने गरदन हिला कर कहा, "आगे क्यो जाते हो ? सब कगाल यहूदी है । भूखो मरेंगे मगर एक कौडी खर्च नही करेंगे ।"

काइटेल तग गली-जैसे रास्ते मे खडा था । उस के कानो मे भनक पडी । वह अपने स्थान की ओर मुड गया । पचास के करीब उम्र । सर पर चाँद । विशुद्ध जर्मन बियर से पोषित स्थूल शरीर । यहूदियो का निर्मूलन शुरू होने से पहले उस का सारा जीवन सुख मे बीता था । अब नौकरी भी छूट गयी थी और

जो पूँजी जमा की थी वह सरकार ने छीन ली थी। आधी जिन्दगी खत्म होने के बाद नयी दुनिया मे नया जन्म लेने की नौबत उस पर आयी थी।

लेकिन उस का स्वभाव सौम्य था। परिस्थिति के आगे झुकना और जिये जाना, यही उस ने सीखा था। आगामी जीवन के विषय मे सोचना उस ने कभी से शुरू कर दिया था!

वह डिब्बे की ओर गया। दरवाज़ा खोला। उस के डिब्बे मे सिर्फ दो व्यक्ति थे। हरमान और उस की बीवी। फ्राउ हरमान पति के आलिंगन मे आश्वस्त थी। पति उसे ब्रेड के कौर खिला रहा था।

काइटेल को देख कर दोनो अलग नही हुए। पिछले दो साल से यहूदियो के लिए निजी, व्यक्तिगत जीवन जैसी कोई चीज थी ही नही। वे इस के आदी हो गये थे। हर जगह पहरा, शक्की नजरें, जासूसो का पीछा। पति-पत्नी की मुलाकातें भी बडी मुश्किल से होती। होती भी कैसे? घर छीन लिये गये। होटल, उपाहारगृह, थिएटर सब के दरवाजे उन के लिए बन्द। खुले थे सिर्फ रास्ते और बगीचे। वहाँ भी तरह-तरह की रुकावटे।

लेकिन काइटेल उलटे पाँव लौट गया। दूसरे ही डिब्बे मे हॅर्टा की माँ अकेली बैठी थी। सिर पर विरल सफेद बाल। मानो जल-जल कर निश्शेष होते भावना-विकारो की राख हो! कीचड-भरी ऑखे। ऑसू बहाने की ताजगी भी नही थी उन मे। जल्दबाजी मे कटे चमडे के टुकडो जैसे आगे को लटकने वाले होठ।

काइटेल की आहट सुन कर उसे लगा, हॅर्टा आयी, उस ने मुड कर देखा और काइटेल को सामने पा कर निराशा से फिर मुँह फेर लिया। बर्लिन छोड देने का शायद उसे न सुख था न दुख। भला कही आदमी इस बात के लिए भी आग्रह कर सकता है कि उसे किस धरती में दफनाया जाये?

काइटेल नीचे बैठ गया। उस ने बुढिया की तरफ देखा। वह थर-थर काँप रही थी। हवा मे ठण्ड थी। उस ने उठ कर दरवाजे बन्द कर दिये। खिडकी का काँच सरका दिया और ऊपर डिब्बे मे गरमाहट छोडने वाला पीतल का जो हैण्डिल था, उसे घुमाने को हाथ उठाया।

बुढिया ने चौक कर उस की तरफ देखा और कहा, "नही, नही! शायद हमें इजाजत नही होगी। हो सकता है यह गरमाहट जर्मनो के लिए ही हो!"

वह फिर नीचे बैठ गया। उस ने बुढिया से खाने के बारे मे पूछा। बुढिया ने सहमति प्रकट की। वह अपने डिब्बे से नाश्ते की चीज़े ले आया। कुछ फल, रोटी के टुकडे, कुछ अण्डे और सैण्डविच। वह देता जा रहा था और बुढिया खाती जा रही थी। दोनो ने बेशुमार खाया।

कभी-कभी बडी अजीब अफवाहे फैलती। ऐसा नही कि हमेशा उन मे सत्य का अश होता। यहूदियों के लिए सार्वजनिक स्थान कब के बन्द हो चुके थे। पिछले सप्ताह खबर फैली कि सार्वजनिक पाखानो और पेशाबघरो का उपयोग भी यहूदियो के लिए निषिद्ध कर दिया गया है। इस खबर को सुन कर यहूदी स्त्रियाँ शायद ही बाहर जाती।

रात के ग्यारह-बारह का समय होगा। मार्था ने कराहने की आवाज सुनी। उस ने अपनी माँ को जगाया। गाडी घडघडाती हुई चली जा रही थी। मार्था की माँ हॅर्टा के डिब्बे की तरफ गयी, काइटेल को बुला लाने के लिए उस ने मार्था से कहा।

कुछ देर के बाद मार्था की माँ लौट आयी। वहाँ का घिनौना दृश्य देख कर वह सिहर उठी थी। काइटेल को देखते ही बोली, "इन जवान लडकियो का कोई भरोसा नहीं। जाने किस के साथ मौज उडाने गयी है। इधर बुढिया का हाल बेहाल है।"

रात के ग्यारह बजे के करीब हॅर्टा की माँ की नीद खुली थी। उस के पेट में दर्द हो रहा था। छाती पर बोझ-सा धरा था। डिब्बे में अकेली। उठ कर बाहर जाने मे भी डर लगता था। कोई चारा ही नही रहा तब वह उठी। दरवाजा खोल कर तग गली जैसे रास्ते की तरफ गयी। डिब्बे के दूसरे छोर पर गुसलखाना और पाखाना था। धुँधली रोशनी। उस में पाखाने के पास झपकियाँ लेती परिचारिका की वर्दी उसे नजर आयी। वह डर गयी। लाचार थी फिर भी लौट गयी। पेट मे जोर से दर्द होने लगा। वह कराहने लगी। वही आवाज मार्था ने पडोस के डिब्बे में सुनी थी। सब सुन कर मार्था को हँसी आ गयी।

काइटेल ने चिढ कर कहा, "दाँत क्यो बिचका रही हो? आगे के दाँत सोने के हैं। वह सोना भी छीन लिया जायेगा, तब होश ठिकाने आयेंगे।"

माँ के असहाय शरीर की घिनौनी हालत देख कर हॅर्टा को लगा कि इस से तो मौत बेहतर है। आज निर्वासन का पहला दिन। अभी जर्मन सरहद पार करनी है। बाकी जिन्दगी अपरिचित दुनिया मे बितानी है और सहारा कोई नही! इस से आज ही उस का अन्त कर दे तो? मगर आत्महत्या इतनी आसान होती है? होती तो पहले ही वह मोक्ष प्राप्त कर चुकी होती। निराशा के चरम आवेश की स्थिति मे वह एक-दो बार मौत की देहली तक दौडती गयी थी। लेकिन वह दरवाजा उस के लिए नही खुला। कुछ ही दिन पहले की बात है। उसे सब याद आने लगा।

उस के घर मे आग लगी। उपनगर मे एक सुन्दर छोटे से रास्ते पर उस का घर था। आग सिर्फ उस के घर में ही नही लगी थी। सारी बस्ती यहूदियो की थी। एक साथ तीन-चार जगह आग लगी। लेकिन यह अप्रत्याशित नही था। पत्थर फेंके जाते। खिडकियाँ टूटती। दरवाजो की तख्तियाँ टूट कर अलग-अलग हो जाती। बाहर जाते समय दरवाजा खोलते हुए भी डर लगता। बाहर से अन्दर आते समय भी वही डर। दरवाजा खोलते वक्त छाती में धक्-धक्! कौन जाने अन्दर क्या नजर आये! आग लगी तब वह घर मे अकेली थी। घबरा कर बाहर आयी। वह भी पिछवाडे के दरवाजे से। रास्ते के किनारे एक पेड के नीचे अँधेरे में खडी रही। लोगो की भीड थी। कुछ भयातुर थे। कुछ सिर्फ देख रहे थे, तो कुछ हँसी मजाक कर रहे थे। आग बुझाने की कोशिश किसी ने नही की। फायर ब्रिगेड को खबर मिली होगी, लेकिन कोई नही आया। यहूदियो की सहायता करना यानी सजा को खुद बुलावा भेजना। आग की लपटें भडक उठी थी। घर ढह रहा था। आँखो के सामने ही जल-भुन कर खाक हो गया। बाहर फाटक पर बोर्ड था, "यहूदी का घर!" फाटक बचा रहा। बोर्ड पर बाद मे किसी ने लिखा, "कभी यहाँ था!"

उस के मन मे शोले भडक उठे। लेकिन उन लपटो मे वह खुद ही जलती रहती। बहुत दिनो से दूर से सुन रही थी। आज पराकाष्ठा हो गयी। तरह-तरह के अत्याचार, अपमान। केवल वर्णन सुनती थी। धीरे-धीरे अनुभव होने लगा।

हर जगह लोग घूर कर देखते, अँगुलियाँ उठाते। नौकरी हो तो नौकरी से हटाया जाता। बेरोजगारी सहनी पडती। रहने के लिए किराये का मकान न मिलता। कुछ खाना हो तो होटलो मे प्रवेश बन्द। दिल बहलाने कही जाओ तो बाहर 'यहूदियो का प्रवेश निषिद्ध' के बोर्ड। उस की नौकरी देर से ही सही लेकिन एक दिन छूट गयी। मालिक जर्मन था। भला आदमी था बेचारा। विदा करते समय उस ने कहा, "फ्राउलाईन, जर्मनी छोड कर जाने की नौबत आ जाये तो मेरे पास जरूर आना। पैसे दे देता लेकिन तुम बाहर नही ले जा सकोगी। तुम ने यहाँ जो काम किया उस का एक अच्छा-सा सर्टिफिकेट जरूर दे दूँगा। जर्मनी में किसी को मत दिखाना। दिखाओगी तो फल मुझे भुगतना पडेगा।"

नौकरी छूट गयी। जैसे-तैसे दिन बीत रहे थे। वह थी अकेली, लेकिन फ्राझ का सहारा था। सिर्फ मुलाकात और दो घडी की बातचीत से धीरज बँध जाता। वह कहता, "डरो मत, हॅर्टा! यह क्षणिक उन्माद की लहर है। एक दिन टूट जायेगी। फिर सब ठीक हो जायेगा।"

आग लगी उसी दिन यहूदियो का जर्मनो के साथ विवाह निषिद्ध करने वाला कानून घोषित हुआ। उस की आशाओ पर तुषारपात हो गया। फ्राझ का ही एकमात्र अवलम्ब बच रहा था; वह भी अब समाप्त हो गया। हॅर्टा जी भर कर रोना चाहती थी। घर था तब लोगो की नजरो से छिप कर रोने को जगह थी। लेकिन वह भी जल गया। अब रोना भी हो तो चोरी से।

वह हतबल हो गयी। फिर भी उठ खडी हुई। कहाँ जाये? समझ में नही आता था। सडकें सुनसान हो गयी थी। युद्ध के कारण रास्ते पर नीली बत्तियाँ थी। उन की कतारो पर कतारे टिमटिमा रही थी। वह उठी और चलने लगी। जाने कितनी देर तक चलती रही। थकावट महसूस होने लगी थी। मन व्याकुल हो आया था। लगातार सोचते-सोचते जैसे वह सुध खो बैठी। सब तरफ शान्ति। कितनी भयावह थी वह शान्ति! जाडे का मौसम। पेडो की छायाएँ फुटपाथ पर पड रही थी। पत्थर पर धूल नम हवा से दबी हुई थी। प्रकाश मे धूल और पत्थरो की शुभ्रता स्पष्ट दिखाई देती। चलते-चलते उसे लगा यह कालीन बिछा हुआ है।

यही उस के पागलपन का प्रारम्भ था। वह जैसे होश मे आयी। मन ही मन उस ने कहा, "यह क्या पागलपन है! रास्ता खूबसूरत दिखाई देता है। लेकिन यह कालीन नही है।" सच क्या है और झूठ क्या है? इन्द्रियो को अनुभव होने वाले द्वन्द्व का प्रारम्भ इसी समय हुआ। कभी एकाध मोटर आती। उस की बत्तियो के प्रतिबिम्बो की रेखाएँ ऐश्फाल्ट के रास्ते पर चमक उठती। वे छूरी-जैसी दिखाई देती। कभी उसे लगता कि वे छुरियाँ तेजी से उस के बदन की तरफ आ रही है। लेकिन पास से कोई मोटर गुजरती तो खूबसूरत खिलौने-जैसी दिखाई देती।

पेड भूत जैसे खडे नजर आते। घरो की खिडकियो से झाँकता प्रकाश। लेकिन जैसे-जैसे बत्तियाँ बुझती जाती, उसे लगता, जैसे उस के आने से ही यह अँधेरा फैला है। एक मन कहता, पागल तो नही हो? यह जैसा दिखाई देता है, वैसा नही है। दूसरा मन तुरन्त जाग उठता और कहता, "नही, जैसा दिखाई देता है, वैसा ही है।"

पेट में अन्न का कण तक नही था। प्राण आँखो मे सिमट आये थे। जर्मनों के साथ ब्याह नही? लेकिन कार्ल जर्मन है! तो क्या वह भी अब मुझ से छिन गया है? उस के आलिंगन का कवच अभेद्य लगता था। लेकिन उस मे भी दरार पड गयी! उस के पास धमकी-भरी चिट्ठियाँ आती है। मेरे कारण उस के प्राण भी संकट मे पड गये है।

एक के बाद एक विचार पीछा कर रहे थे। मन के निकट सब से सच्ची, उसे सहारा देने वाली प्रेम की शक्ति, वह भी नष्ट हो गयी। तो अब संसार मे सच्चा रहा ही क्या है? घर चित्र जैसे लगने लगे। सडकें केवल काले-नीले रगो की पट्टियो-जैसी। नीली रोशनी मे बागो की मेंहदी नजर आती। उस पर शबनम की बूंदें चमकती। लगता, देखते ही देखते ये भाप बन कर उड जायेंगी। बीच-बीच मे अपने ही बूटो की आवाज सुन कर वह पीछे मुड कर देखती। कभी कोई होता, कभी नही। लेकिन किसी ने उस से बात नही की। उस के अस्तित्व की ओर ध्यान नही दिया। एकाएक उस के मन मे विचार आया, कही मेरा अस्तित्व नष्ट तो नही हो गया? मै अदृश्य बन कर तो नही घूम रही हूँ?

नही, नही, यही वह र्बालन है। यह कैसे हो सकता है कि कोई मेरी तरफ देख नही रहा ? बदचलन लडकियाँ मिलती। उन को कोई छेडता। वह सोचती, कम से कम कोई मुझ से पूछे, 'चलती हो ?' तो समझूँगी कि मै जिन्दा हूँ। 'हाँ' कहूँगी और मुझे मेरी आवाज़ सुनाई देगी। लेकिन किसी ने उस की तरफ नही देखा। बाग आया। खूबसूरत फुलवारियाँ मद्धिम प्रकाश मे चमक रही थी। वह देखती खडी रही। हमेशा की आदत। बेंच पर बैठ कर विश्राम करना यहूदियो को मना है। एकाएक विचार आया, बेंच पर बैठ कर देखूँ। अगर मै ज़िन्दा हूँ तो कोई न कोई ज़रूर आपत्ति करेगा। यहूदी हूँ इस लिए उठने को मजबूर करेगा। लेकिन किसी ने नही देखा। किसी ने नही उठाया।

ठण्डी हवा चुभ रही थी। फिर भी मन पागलपन ओढ लेने की कोशिश कर रहा था। विचार आया। मेरे ऊपर सब जगह बन्धन ! खाना मना, देखना मना। क्या जीना भी मना है ? फिर यह हवा खुल कर मेरी देह पर से कैसे गुजरती है ? क्या इसे पता नही कि मै यहूदी हूँ ?

वह फिर चलने लगी। अब उसे विश्वास हो गया था। मोटरें बिलकुल करीब से जाती तो उसे डर न लगता। जानेवाला व्यक्ति स्त्री है या पुरुष, यह समझ मे नही आता था। उस ने समझ लिया, यह सब मेरे जीवन मे नही हो रहा है। मेरी दुनिया दूसरी ही है। यह सच कैसे हो सकता है कि र्बालन में कोई मेरी ओर देखता तक नही ? इन सडको पर मै घूम-फिर चुकी हूँ। पिछले महायुद्ध मे हमारी हार हुई। इन्ही सडको पर हम जर्मन गले मिल कर रोये थे। पिता जी युद्ध पर गये। माँ की अँगुली पकड कर मै चलती। परिचित लोग इशारे करते। माँ अभिमान से सर ऊँचा कर लेती। मै सहेलियो से कहती, मेरे पिता जी जर्मनी के लिए लड रहे है। पिता जी जान से मारे गये। हम बस में जा रही थी। माँ की दूकान मे जर्मन सहेली थी। जवान थी। माँ को उस ने देखा और उस से लिपट गयी। दोनो गालो को चूमा और कहा, "मुटी, मुटी, मै अनाथ हो गयी !" सच क्या है ? वह या यह ? वही अँगुलियाँ, वही नजरें— बेचारी सत्तर साल की बूढी मेरी माँ। भरी सडक पर फुटपाथ की बर्फ घुटने टेक कर पोछ रही है ! नही, नही, यह झूठ है। जाडे का मौसम। बेहद बर्फ। सच होता तो क्या वह मर नही जाती ? कम से कम गठिया भी क्या उसे नही होता ?

नही, खिडकी पर पत्थर टकराते है। तार टूट कर घर मे बत्तियाँ बुझ जाती हैं। टूटी खिडकियो में से गन्दगी बिस्तरे पर आ गिरती है। यह सब झूठ है। वही पुरानी दुनिया सच्ची है। हम यहूदी नही, हम जर्मन है।

लेकिन पुरानी दुनिया ? यानी बहुत दिन हुए। तो मै ज़िन्दा नही हूँ ? फिर भीतर की तरफ मुडी दृष्टि को कौन-सी रोशनी चुभती है ? कभी दीवार से टकराती हूँ तब जो वेदना होती है, वह सच है या झूठ ? झूठ है वह सब। जो थोडा-बहुत सत्य है उस का आभास-मात्र। घर खो बैठी, कार्ल को खो बैठी, एक जर्मन नागरिकता थी उसे भी खो बैठी !

इस कशमकश से उसे थकावट महसूस हुई। खयाल आया, इस बत्ती के गिर्द चक्कर काटते पतगे-जितनी यह देह, लेकिन इस के भोग कितने अपार ! इस से तो यह झूठी दुनिया ही आँखो से ओझल कर दी जाये तो ? हाँ, यह आत्महत्या भी नही होगी। खून, आत्महत्या, कितने बडे-बडे नाम ? इनसान की हत्या की जाये तो वह खून है। लेकिन एकाध मच्छर कही रौंदा गया तो क्या हम ध्यान देते है ?

सामने ट्यूब का स्टेशन था। सोचा, आत्महत्या के लिए ट्यूब का अँधेरा ही ठीक है। इस लिए उस ने स्टेशन के अन्दर प्रवेश किया। लेकिन जाने कैसे रास्ता भूल गयी। भोर होने आयी थी। वह गुसलखाने मे गयी। सामने एक बडा आईना था। उस में उस ने अपने को देखा। उसे विश्वास नही हुआ। इतनी बडी पाँच-साढे पाँच फुट की देह ! पूरी की पूरी उस की अपनी ! कितनी बडी सम्पत्ति जान पडी वह उसे ! उसे अपने अस्तित्व का एहसास हुआ। हाथ, पाँव, धड, मस्तिष्क सब बडे बन कर उस की आँखो मे समा जाने की कोशिश करने लगे। इन को नष्ट कर दूँ ? कितना मुश्किल है यह ? और कितना पागलपन ?

बडी देर तक वह अपनी तरफ देखती रही। आखिर नल के पास गयी। सिर पानी से भिगोया। जैसे होश मे आयी। रास्ता भूल कर भटक गयी इसी लिए उस दिन बच गयी थी वह।

पाँच

नाश्ता कर के मै ऊपर आया। रास्ते मे ही मन्नान मिल गया। वह हॅर्टा से कुछ कह रहा था। पहले तो हॅर्टा उस की बात अनसुनी करती रही। आखिरकार उस ने कहा, "आप को अनेक धन्यवाद! लेकिन मैं वहाँ जाना नही चाहती। मुझे भीख लेने की आदत नही है।"

काइटेल हँस रहा था। मै ने वजह पूछी। उस ने उत्तर दिया, "हम यहूदी सब कुछ कर सकते है। नही कर पाते तो केवल दान-धर्म।"

पोर्ट सईद मे यहूदी शरणार्थियो की सहायता करने वाली एक यहूदी कमिटी थी। कल रात उस ने कुछ कपडो की गठरियाँ और कुछ पैसे भेजे थे। सहानुभूति का सन्देश भी भेजा था। डेक पर सभी यहूदी इकट्ठे हो गये थे। किसी ने सन्देश सुनाया। कपडो की गठरियाँ खोल दी गयी। अधिकाश कपडे पुराने थे। रकम भी बतायी गयी—लगभग पचीस रुपये! यानी बडी मुश्किल से रुपया-बारह आने हरेक के हिस्से मे पडते।

बँटवारा शुरू हुआ। स्त्रियाँ आगे थी। देख कर, नाप कर वे कपडे उठा लेती। बीच मे ही झगडे शुरू हो जाते। फिर समझौते होते, एक-दूसरे को मनाया जाता। साल-दो साल पहले उन मे से हर व्यक्ति कमाता था। इतने कम अरसे मे ही उन्हे भीख लेने की आदत पड गयी थी। उस सामूहिक दान मे उपस्थित नही थे तो सिर्फ दो व्यक्ति। हॅर्टा और उस की माँ।

जहाज़ सुवेज नहर मे था। हवा मे फर्क महसूस हुआ। दोनो तरफ रेगिस्तान। दूर खजूर के पेडो का एकाध झुण्ड नजर आता। दायी तरफ सुवेज़ रेल। उस के छोटे-छोटे स्टेशन आते। उन के इर्द-गिर्द कुछ पेड दिखाई देते। आँखो के लिए हरियाली की शीतलता बस इतनी ही। बाकी तमाम वीराना।

धूप तेज होने लगी। गरम लू बह रही थी। अभी-अभी सब युरॅप से आये थे। छटपटाने लगे। दोपहर मे दो-तीन बजे सब के होश उड गये। सब चुपचाप लेटे हुए थे।

शाम को हम दो-चार हिन्दुस्तानी खडे थे। यहूदियो की महायता करने के बारे मे बात चली। सहाय ने मजाक मे कहा, "मेरा सुझाव है कि मिस्टर चक्रधर और मदनानी को इस चन्दे से छूट मिलनी चाहिए।"

माइकेल ने भोलेपन का स्वाँग रच कर कहा, "क्यो? चन्दा तो सब से ही वसूल होना चाहिए!"

चटर्जी खडे थे। उन्होने व्यग-भरे स्वर में उत्तर दिया, "उन्हे जरूर छूट दे देगे। वे अपने अपने ढग से यहूदियो का उद्धार ही तो कर रहे है!"

सहाय ने कहा, "मजाक छोडिए। मै सूची तैयार करता हूँ। आप अपनी-अपनी रकम लिख दीजिए। मण्डल, तुम्हारा नाम सब से पहले। बताओ, कितनी रकम लिखूँ?"

योगेश्वर मण्डल रेलिंग पर झुक कर बाहर देख रहा था। उस ने तुनक कर उत्तर दिया, "अपने घर को आग लगाने वालो की मै बिलकुल सहायता करना नही चाहता!"

सब हक्के-बक्के रह गये। सहाय ने फाउण्टेनपेन निकाला था। उस का ढक्कन बन्द करते हुए उस ने उपहास किया, "तुम तो दो साल ही जर्मनी मे रहे। इतने ही समय मे कट्टर नाजी भी बन गये?"

मण्डल ने उत्तेजित हो कर जवाब दिया, "गद्दारो से नफरत करने के लिए नाजी बनना ही जरूरी नही है!"

माइकेल ने गरदन हिला कर इस प्रकार का अभिनय किया कि मण्डल से अब कोई आशा नही। चटर्जी हँसते हुए बोले, "लगता है हिटलर को 'माइन काम्फ' आप ने याद कर रखी है!"

"सिर्फ हिटलर ही नही कहता कि यहूदियो ने जर्मनी को डुबो दिया। सारा जर्मनी यही कह रहा है!"

मै ने आगे बढ कर कहा, "जर्मनी को डुबो दिया? यहूदियो ने ऐसा किया क्या है?"

मण्डल ने उत्तेजित हो कर कहा, "यह पूछिए कि उन्होने क्या नही किया। पिछले महायुद्ध मे इन्ही घर के भेदियो ने जर्मनी के गले पर छुरी फेर दी। यहूदियो ने जर्मन राष्ट्र के युद्ध के भेद शत्रुओ को बेच डाले। सारी दुनिया मे युद्ध-कर्ज के रूप मे धन बटोर कर युद्ध जारी रखने वाले मित्र-राष्ट्रो के खजाने यहूदियो की पूँजी से भर गये थे। यहूदियो के कारखानो मे बम बनाये जाते तो उन मे मिट्टी भरी मिलती। सैनिको की वर्दी में, बूटो मे पेड की छालें भरी रहती। युद्ध-काल मे जर्मनी को दिया गया अन्न भी सडा हुआ और सत्त्वहीन रहता। तमाखू मे लकडी का भूसा मिला दिया जाता। पूरा जर्मन राष्ट्र तबाह हो रहा था, पर मुनाफे के लालची यहूदियो को उस की परवाह नही थी।"

शिन्दे आगे आ कर शान्ति से बोले, "यह यहूदी जाति का दोप नही, मुनाफाखोरी की नीव पर खडी समाज-व्यवस्था का दोष है। आप समझते हैं कि आप ने जो बताया वह सब सिर्फ जर्मनी मे ही हुआ? इंग्लैण्ड मे भी वही हुआ। लडाई के जमाने मे अमरीकी कम्पनियो को माल का ठेका दिया जाता, लेकिन इस तरह की झूठी अफवाहे फैला कर कि उन मे से बहुत-सी कम्पनियो मे जर्मनो की पूँजी लगी है, मनचाहे ठेके प्राप्त करने वाले कारखानो के मालिक इग्लैण्ड मे भी है। आप ने जिस तरह का बताया उसी तरह का अन्न इग्लैण्ड में भी बेचा गया। वैसे ही जूते और वर्दियाँ कई बार सप्लाई की गयी।"

माइकेल ने भी जोश मे आ कर कहा, "इग्लैण्ड, फ्रास और जर्मनी या पिछले महायुद्ध की बात क्यो करते हैं? हिन्दुस्तान मे क्या हुआ? असहयोग आन्दोलन के समय क्या व्यापारियो ने लोगो की भावनाओ का नाजायज फायदा नही उठाया? मिल का माल खद्दर कह कर और जापानी माल स्वदेशी के नाम पर नही बेचा? तो क्या आप इन सब का निर्मूलन करेंगे?"

मण्डल चुप था। उस की आँखें सुर्ख हो गयी थी। निश्चय के स्वर मे वह बोला, "जरूर करेंगे। स्वार्थ के लिए राष्ट्र की उन्नति मे बाधा डालने का पाप जिन्होने किया है वे सब हमारे ध्यान मे है। इस का बदला उन से जरूर लिया जायेगा।"

माइकेल ने चिढ कर कहा, "स्वार्थ के लिए हाथ-पाँव न हिलाने वाला कोई

व्यक्ति हिन्दुस्तान में आप को नज़र आया है ?"

उस ने चिढ कर कहा, "यह तो नही बताता। लेकिन अपने स्वार्थ की वेदी पर राष्ट्रीय हित की बलि चढाने के लिए सब से पहले कौन तैयार होता है यह तुम चाहो तो बता सकता हूँ।"

उसे छेडने के लिए आगे बढ कर मन्नान बोला, "हिम्मत हो तो बताइए!"

"इस में हिम्मत की क्या बात है ? माइनॉरिटी के नाम पर ज्यादा हक लूटने की कोशिश करने वाली जातियाँ हमारे बीच हैं। न मिले आज़ादी, लेकिन अपना उल्लू सीधा होना चाहिए यही उन का राष्ट्रीय दर्शन—"

मन्नान बीच मे ही उत्तेजित हो कर बोला, "तो आप उन की हालत यहूदियो जैसी बना देना चाहते हैं ?"

मण्डल ने उत्तर दिया, "उन की आँखें वक्त पर नही खुली तो परिणाम यही होगा, इस मे कोई सन्देह नही!"

हिन्दुस्तानी ईसाइयो को मण्डल ने जो ताना मारा था वह माइकेल से सहा नही गया। उस ने उसे खिझाने के उद्देश्य से कहा, "आप लोगो ने वैसी कोशिश की तो क्या होगा ? आप का क्या ख़याल है ?"

मन्नान बोला, "यह मुझ से पूछिए। मै बताता हूँ कि क्या होगा। पैलेस्टाइन यहूदियो का था। आज अरबो का है। हिन्दुस्तान का नाम बदल जाना भी नामुमकिन नही। आज ही कॉंग्रेस पारसी, ईसाई, मुसलमान, सब पर इतने अत्याचार कर रही है कि शायद एक ही पीढी मे यह हो कर रहेगा!"

शिन्दे गुस्से से लाल हो गये। मन्नान से बोले, "हिन्दुस्तान का नाम बदल भी जायेगा शायद; लेकिन याद रखिए कि बदलने वालों मे से कोई नया नाम रखने के लिए जिन्दा नही रहेगा!"

इसी समय एक विचित्र घटना घटी। हम किनारे की तरफ खडे थे। सामने दूसरा जहाज़। नहर बहुत छोटी थी इस लिए करीब-करीब सट कर ही वह जहाज़ जा रहा था। एकाएक दोनो जहाजों पर जोर-ज़ोर से चिल्लाने की आवाज आयी।

दोनो जहाज़ो के डेक पर ख़लासी खडे थे। अधिकाश के हाथों मे खाना खाने

की छुरियाँ और काँटे थे। कुछेक के हाथों में लाठियाँ। गाली-गलौज की कोई हद नही थो। इन छुरियो से सब एक-दूसरे का गला काटने का अभिनय कर रहे थे। जहाजो पर फौजी अनुशासन होता है इसी लिए हम उस दिन बच गये। धीरे-धीरे वह जहाज़ पीछे चला गया।

वह फ्रान्सीसी जहाज था। हमारा इटालियन। हमारे जहाज़ पर से किसी ने चिल्ला कर कुछ कहा और फ़ान्स का अपमान किया तो दो फ्रान्सीसी खलासी डेक के रेलिंग पर चढ गये। उन में से एक ने मुसोलिनी की तरह भाषण देने का अभिनय किया। दूसरे ने उस के बूट जबान से चाटते हुए 'ड्यूचे ड्यूचे' कह कर छाती पीटना शुरू किया। मुसोलिनी बनने वाले खलासी ने बोलते-बोलते जबडा जरूरत से ज्यादा खोल दिया तो वह फिर बन्द ही नही हो पा रहा था। तभी तीसरा खलासी ऊपर चढा और उस की ठोडी पर नीचे की तरफ जोर से घूँसा मार कर उस का मुँह बन्द कर दिया। फिर बोला, "बेवकूफ, ताकत से ज्यादा मुँह क्यो खोलता है ?" सब दौडे। मामूली चीजें एक-दूसरे पर फेंकी गयी। हम पहुँचे तब झगडा पराकाष्ठा को पहुँचा हुआ था।

यहूदियो की सहायता की बात वही रह गयी। युरॅप रणागण बनने जा रहा है, युरॅप आग में जल रहा है तो हिन्दुस्तान भी उस में झुलस रहा है; यहूदी उबलते तेल की कढाई मे है तो हम भी छन्ने पर हैं, इसी तरह के विचार मेरे मन में आ रहे थे। नीद मे भी सपना आया कि मै व्हेसुव्हियस के मुँह पर बैठा हुआ हूँ।

सुबह लुई की माँ मेरे कमरे मे आयी। उस ने सन्देश सुनाया, "आप को डॉक्टर बुला रहे हैं।"

पोर्ट सईद की हवा के कारण लुई बीमार पड गया था। शिन्दे रात-भर उस के बिस्तरे के पास बैठे रहे। केबिन औरतो का था। रात-भर कमरे में डॉक्टर! बेचारी परेशान हो गयी थी।

लुई को मेरे कमरे में लाया गया। मै, डॉक्टर शिन्दे और लुई की माँ ने मिल कर सेवा शुरू की। हम ने तीमारदारी का वक्त बाँट लिया। लेकिन माँ

प्राय चौबीस घण्टे वही रहती। शिन्दे भी शायद ही लुई को छोड कर कही जाते। मै ने बहुत समझाया पर मानते ही नही थे।

दूसरे दिन भी बुखार नही उतरा। उस की हँसी लुप्त हो गयी थी। चेहरा मुरझा गया था। लाल सागर की धूप की तल्खी। वह दिन-रात छटपटाता रहा। लेकिन शाम को तो जैसे सन्निपात ही हो आया। पोर्ट सईद वाली रात मे शिन्दे ने जो अँगरेजी उसे पढायी थी, वही वह बार-बार बडबडाता रहा।

उस रात हम दोनो के होश उड गये। लेकिन शिन्दे ने धैर्य से काम लिया। उस की बातें सुन कर उन का हृदय तडप उठता। लेकिन वे शान्ति से सेवा कर रहे थे। पसीने से गीली चादरे बार-बार बदलनी पडती। हाथ-पाँव मे दवाइयाँ मलनी पडती। उसे दूध पिलाना पडता। फलो का रस निकालना पडता। सब कुछ वे स्वय कर रहे थे। लुई की माँ भौचक्की-सी बर्थ पर पैताने बैठी रहती। मुझे डर लगता कि कही पागल न हो जाये। वह शिन्दे से सवाल करती। उसे लग रहा था कि आशा नही है लेकिन वे उसे झूठा धीरज बँधा रहे है।

शिन्दे ने एक बार मुझ से कहा, "मुझे पूरा विश्वास है कि मै इसे बचा लूँगा। बीमारी के मामले में छोटे बच्चे अच्छे होते है। उन के मस्तिष्क मे मृत्यु की कल्पनाएँ नही होती। इस बात की चिन्ता भी नही होती कि मरने के बाद क्या-क्या पीछे छोडना पडेगा। बेसिर-पैर चिन्ताओ से उन की शक्ति क्षय नही होती। वह निरन्तर बीमारी के आघात का प्रतिरोध करने मे लगी रहती है।"

उन दिनो हॅर्टा से मेरी मुलाकात शायद ही हुई हो। लुई की खबर लेने वह मेरे केबिन मे आती। तब थोडी-सी बात-चीत हो जाती, बस। लुई की सेवा करने के लिए वह तैयार थी। लेकिन शिन्दे ने कृतज्ञता-ज्ञापन के साथ उस का प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। उन्होने कहा, "उस की माँ की उपस्थिति भी मैं यहाँ नही चाहता। लेकिन विवश हो कर ही उसे यहाँ बैठने दे रहा हूँ। जितने अधिक लोग, व्यवस्था उतनी ही कम। परिचर्या ठीक नही हो पाती।"

एडन आया। सुबह लुई का बुखार उतरा। वह सब को जानने-पहचानने लगा। खुद खाने-पीने को माँगने लगा। सुबह उस ने शिन्दे को बुलाया। कॉफी माँगी। उस वक्त शिन्दे की आँखे भर आयी। उन्होने कॉफी पिलायी। फिर पीछे की दीवार के सहारे सिर टिका कर उन्होने आँखें मूँद ली और वही सो

गये। पोर्ट सईद छूटने के बाद उन की यह पहली नीद थी।

लुई को उस के अपने केबिन मे लाया गया। चादर ओढायी गयी। डॉक्टर उस के ऊपर झुके हुए थे। वे खडे हुए तो सहसा लुई की माँ उन के गले से लिपट गयी और सिसकती हुई बोली, "डॉक्टर, आप थे इसी लिए लुई बचा, मै बची।"

शाघाई जाने वाले यात्रियो को चेचक और हैज़े का टीका लगवाना पडता है। जिस दिन यह नोटिस लगा उसी दिन अफवाह फैल गयी कि टीका लगवाने की फीस देनी पडती है। लगभग एक पौण्ड यानी चौदह रुपये। पता नही चलता था कि सच क्या है और झूठ क्या है। टीका नही लगवाया तो भय था कि शाघाई मे उतरने नही दिया जायेगा। इसी भय का मदनानी ने लाभ उठाया, मार्था को पैसे का लालच दे कर। उस के दोस्तो को जब इन बातो का पता चला, तो वे भी मजा लूटने मे सहभागी हुए। सभी यहूदियो को यह बात मालूम हो गयी थी।

लुई को बुखार आते ही उस की माँ के होश उड गये थे। बीमार बच्चा। किसी का सहारा नही। एक पाई तक पास नही। जहाँ मामूली टीका लगवाने के लिए ही एक पौण्ड देना पडता है, वहाँ इतनी बडी बीमारी से कैसे निबटेगी और पैसे कहाँ से लायेगी? उस के दिमाग मे मार्था की बातें घूमने लगी। बच्चे को खो देगी या आत्मघात के लिए तैयार होगी?

एडन गया। अब जहाज खुले समुद्र मे था। बरसात के दिन। तूफान आया। जहाज हिलने लगा, उछलने लगा। कभी-कभी लहरे डेक पर आ कर टकराती। कुरसी पर बैठने के बावजूद भरोसा नही होता था कि कभी भीगना नही पडेगा। सामने देखने की हिम्मत नही होती थी। लगता था कि चारो ओर का क्षितिज झूले पर चढा हुआ है।

समुद्री बीमारी फैल गयी। प्राय सभी परेशान हो उठे। खाना-पीना तक नही सूझता था। सीधे चलना तक मुश्किल। खडे होते ही शरीर झनझनाने लगता। पेट मे ऐंठनी-सी लग जाती। कई बार प्रतीत होता जैसे उस के भीतर अँतडियाँ नही है और आदमी ऐसा बैठ जाता जैसे उस की कमर टूट गयी हो।

मुझे भी तकलीफ हुई। नीद के बिना कई रातें बितायी थी। उन का भी

असर पडा। थोडा-सा बुखार भी आया। मै केबिन मे सोया हुआ था। पहले दिन हॅर्टी आ कर बैठी थी। दूसरे दिन वह भी सो गयी। लेकिन शिन्दे दोनो दिन जागते रहे। वे मेरे पास आ कर बैठते। लुई का स्वास्थ्य अब धीरे-धीरे सुधर रहा था। इस लिए वे खुश थे। बराबर उसी के सम्बन्ध मे बातें करते।

शाम को वे कमरे मे आये। मुझे अच्छा लग रहा था। मै उठ कर बैठा हुआ था। उन से बोला, "मुझे डेक पर ले चलेंगे आप? खुली हवा मे अच्छा लगेगा।"

उन्होने इनकार कर दिया। दो दिन लेटे रहने को कहा। मै ने कहा, "अब दो दिन के बाद तो बम्बई आयेगी।"

वे हँस कर बोले, "तो बुरा क्या है?"

मै ने कहा, "मै ऊपर जाना चाहता हूँ। हॅर्टी से मिलना चाहता हूँ।"

शिन्दे गम्भीरता से गरदन हिला कर बोले, "आप की और लुई की बीमारी से एक लाभ अवश्य हुआ। उस छोकरी के शिकजे से आप छूट गये।"

उन की बातो की तरफ ध्यान न देते हुए मैने कहा, "डॉक्टर, मै उस से मिलना चाहता हूँ। आप मेरा सन्देशा पहुँचा देंगे?"

"आप की इच्छा हो तो पहुँचा दूँगा। पर मुझे नही लगता कि वह आयेगी। दिन-भर डेक पर लेटी रहती है। न उस से उठा जाता है, न वह चल सकती है। मन्नान हमेशा उस के पास बैठा रहता है। सेवा करता है, जरूरतें पूरी करता है। रात में एक प्रकार से गोद में उठा कर उसे केबिन में ले जाता है। बताइए, अब आप से मिलने का वक्त उसे कैसे मिलेगा?"

जवाब में मै ने कुछ नही कहा और बिस्तरे पर लेट गया। शिन्दे फुस-फुसाये, "दैट्स सैन्सिबुल!"

रात को नौ बजे के लगभग हॅर्टी केबिन मे आयी। वह लडखडा रही थी। सारे शरीर पर थकावट के चिह्न थे।

मेरी गद्दी पद दो सेब रख कर बोली, "डॉक्टर कहते थे तुम कुछ खाते नही। ये फल खा कर देखो। तुम्हें अच्छा लगेगा।"

मेरा मन विषाद से भरा था। मैं ने उत्तर दिया, "किसी भी चीज़ की चाह नही, हॅर्टा !"

उस ने अनुरोध किया, "थोडी-सी ब्रैण्डी पियोगे ? समुद्री बीमारी के लिए बडी मुफीद होती है।"

कुछ देर रुक कर मै ने उत्तर दिया, "ठीक है, पी लूँगा। थोडी देर के बाद बार से मँगवा लूँगा।"

रूमाल खोलती हुई वह बोली, "आधा पेग पीना हो तो बार का खर्च किस लिए ?" रूमाल मे छोटी-सी बोतल थी। सिंक पर से प्याला उठाते हुए वह आगे कहने लगी, "मेरे लिए तो ब्रैण्डी ही अच्छी रहती है। माँ भी ब्रैण्डी पर ही जी रही है।"

उस ने प्याला आगे बढाया। मै उठ कर बैठ गया। चिढ कर बोला, "हॅर्टा, मेहरबानी कर के यहाँ से चली जाओ। क्यो सता रही हो मुझे ?"

लेकिन उस को गुस्सा नही आया। थोडी-सी हँसी आ गयी। प्याला आगे बढा कर उस ने कहा, "लो, पियो ! फिर मै जाती हूँ।"

मैंने उत्तेजित हो कर कहा, "यह प्यार की जबरदस्ती क्यो ? तुम्हारा प्यार मुझे असह्य हो जाता है। तुम जानती हो अच्छी तरह। इस का कोई अन्त नही। हमारा ब्याह कभी नही हो सकता !"

हताश हो कर उस ने खडे-खडे ही मेरी गोद में सिर टिका दिया। "बॉब, कितनी बार बताओगे ? मै सब जानती हूँ। किसी बात की कोई आशा नही। आँखो के सामने हो तब तक तुम से प्यार करने का मेरा सुख छीनने से तुम्हे क्या मिलेगा ?"

मै ने ब्रैण्डी पी ली। फिर बिस्तरे पर लेट गया।

न सोचने का संकल्प करने से कभी विचार रुकते है। चोटी से टूट कर लुढकने वाला पत्थर घाटी तक पहुँच कर ही रहता है। हॅर्टा मुझे भाती है। मै हॅर्टा से प्यार करता हूँ। लेकिन उस से ब्याह करना कहाँ तक ठीक होगा ? प्रेम एक चीज़ है और ब्याह दूसरी। ब्याह प्रेम की परिणति नही। ब्याह यानी बासी प्रेम। महाराष्ट्र के अनेक प्रेम-विवाहो के इतिहास मै जानता था। उन व्यक्तियों के दिल के अंगारे बुझ गये और अब बाकी है सिर्फ कोयले और राख ! प्रेम-

विवाहो पर लिखे हुए उपन्यास मै पढता हूँ। उन मे विवाह-पूर्व की, आकर्षक धैर्य की यात्रा का चित्रण बहुत मिलता है। लेकिन विवाहोत्तर प्रेम का बासीपन पहचान पाने का साहस किसी मे नही होता। जहाँ आरम्भ होना चाहिए वहाँ अन्त कर के लेखक अपना पिण्ड छुडा लेते हैं।

मै निष्ठा से डरने लगा था। दोस्त गले पर छुरी फेर देता है तो मृत्यु की यन्त्रणा होती है। साझीदार धोखा देता है तो मनुष्य सोचता है कि यह दुनियादारी है और निरन्तर चिन्ता से मुक्ति पा लेता है। उमा का ही भरोसा जब नही रहा, तो हॅर्टा का क्या भरोसा ? और भरोसे की अपेक्षा करने का मुझे अधिकार भी क्या है ? कल का दिन बीत जाये, परसो बम्बई पहुँचते ही दोनो को छुटकारा मिलेगा। दो-चार दिन याद आयेगी। समय की सान पर बडे-बडे दु ख घिस कर चुक जाते है।

जहाज़ पर सब कुछ था। लेकिन कैलेण्डर कही नज़र नही आया। मुश्किल से पता चल पाता कि कौन-सा दिन है। बन्दरगाह आते ही लगता कि नयी तारीख निकल आयी। अन्यथा केवल पानी, प्रकाश, अन्धकार और आकाश। शून्य की विशाल सुरग मे से यात्रा जारी थी।

लेकिन आज परिचारको की भाग-दौड शुरू हो गयी। सामान पर कस्टम के नम्बर लगाये गये। बाँध-जूड होने लगी। धोबी कपडे ले आया। नाई की दूकान मे जगह मिलनी मुश्किल हो गयी। फोटोग्राफर से पैकेट और प्रवास के दूसरे बिल आ गये। स्नेह-चिह्नो का आदान-प्रदान होने लगा। कल ...तारीख। कल बम्बई।

मगर कल यानी बारह घण्टे। जल्दी तो सभी को थी। कल यानी कब ? कितने बजे ? खबरे फैलने लगी। फासले का हिसाब लगाया जाने लगा। अन्दाज़ था कि शाम तक पहुँच जायेंगे। यानी चौबीस घण्टे बाकी थे। मेरा मन शान्त था।

जैसे-जैसे जहाज हिन्दुस्तान के किनारे की तरफ बढता जा रहा था वैसे-वैसे समुद्र शान्त होता जा रहा था। सारा वातावरण धूसर हो उठा था। आकाश

मलिन और पानी गँदला दिखाई दे रहा था। तीन दिन की बेशुमार भाग-दौड से मानो पचमहाभूत थक गये थे।

सब लोग डेक पर खडे थे। आज एक जगह इकट्ठे है। कल इसी समय सब बिखरे हुए होगे। फिर जीवन मे दुबारा मिलें, न मिले! बातें चल रही थी, सब को घर बुला रहा था। बन्दरगाह पर कौन आयेगा, बम्बई में कितने दिन रहेंगे, कौन-सी गाडी से आगे जायेंगे, घर कब पहुँचेंगे, इतने दिन के बाद कौन-सा फर्क महसूस होगा?

प्रिय व्यक्तियो, प्रिय स्थानो और प्रिय वस्तुओ की तमाम यादें!

यहूदियों के चेहरे अब आँखो के सामने आते है। वे हमारी बातें नही समझ रहे थे। लेकिन हमारे चेहरे के भाव ही कितने मुखर थे! अर्थ जानने के लिए भाषा की जरूरत नहीं थी। सारी बाते घूम-फिर कर आखिर एक ही बिन्दु पर पहुँच जाती। हिन्दुस्तान, बम्बई, और फिर घर, घर, घर!

हम कल मुक्त होने वाले बन्दी और वे आजन्म निर्वासन के दण्डभोगी!

फोटो की बात पहले शिन्दे को सूझी। वही कैमरा ले आये। उन का और लुई का चित्र मै ने लिया। देखते-ही-देखते फोटो खीचने का रोग-सा फैल गया। फोकस मे जितने लोग समा सके उन सब के सामूहिक फोटो। फिर एक प्रान्त के, एक भाषा के, एक केबिन के, एक बैठक के, तरह-तरह के फोटो खीचे गये। हम सब खडे थे। काइटेल आया और बोला, "आप सब लोगों का एक फोटो लेना चाहता हूँ।" हम सब खडे रहे। मन्नान, मै, हुँर्टा और अन्य यहूदी। उसी जल्दबाजी में हॅर्टा ने धीमे स्वर मे कहा, "हम दोनों एक अलग फोटो खिचवायेंगे, समझे!" मै ने बात मान ली।

मन्नान ने हॅर्टा की बात सुनी। सामने उस के दो मुसलमान दोस्त खडे थे। वह उन के पास गया और फिर लौट कर हॅर्टा से बातें करने लगा। तभी एक दोस्त ने चिल्ला कर कहा, "भई, तसवीर निकालता हूँ। जोरू को साथ ले के बैठो।"

हॅर्टा ने गरदन हिला कर इनकार कर दिया। उस दोस्त ने फिर कहा, "रात-दिन तुम्हारे साथ बैठा करती थी। अब पाँच मिनिट के लिए शरमाती है?"

मन्नान ने हँस कर जवाब दिया, "भई, मानती नही है।"

"वाह यार! मानती कैसे नही? मर्द हो या कौन?"

"लेकिन शादी नही हुई है न? नही तो देख लेता!" इतना कह कर वह हँसा।

मै सब सुन रहा था। हॅर्टा उन दोनो की ओर बारी-बारी से देख रही थी। क्या बोल रहे हैं, उस की समझ मे कुछ नही आ रहा था। मेरे मन मे एक विचित्र भाव कौंध गया। एक यहूदी लडकी! वह एक हिन्दू से प्यार करती है। एक मुसलमान उसे चाहता है। मै शादी कर लूँ तो रोज का खाना भी मेरे घर मे उसे अलग बैठ कर खाना पडेगा। मन्नान ने की तो भी रहन-सहन अलग, खाना अलग। इस लडकी की इतनी उम्र हो गयी है। इस के आचार, इस की अपेक्षाएँ सब अलग! जिस किसी घर मे अब यह पाँव रखेगी, वहाँ के कुलाचार, वातावरण के अनुसार जीवन को नये साँचे मे ढालने के लिए उसे अपने-आप को कितना बदल देना पडेगा!

हॅर्टा ने दृढतापूर्वक फोटो के लिए इनकार कर दिया। उस दोस्त ने मन्नान को आँखो से इशारा किया। वह बताना चाहता था कि तुम दोनों बाते करते-करते जाओ और मै चुपचाप दोनो की तसवीर उतार लूँगा।

पल-भर के लिए मन्नान मोहवश हो गया। जैसे बिलकुल सहज भाव मे उस ने हॅर्टा की कमर मे हाथ डाला। लेकिन हॅर्टा ने उस की इस चेष्टा का विरोध किया तो उसे होश आया। वह अलग हो गया। अपने दोस्त से उस ने कहा, "उस की मर्जी नही है। छोडो!"

हॅर्टा आरामकुरसी पर पसर गयी और मुझ से बोली, "हमारा फोटो खिचना है न? कब?"

मै शिन्दे की प्रतीक्षा कर रहा था। उसे बता दिया।

इर्द-गिर्द लोगो की गपशप जारी थी। हरमान बोला, "अब आप को चौबीस घण्टे बिताना बहुत भारी हो जायेगा न?"

मै ने कहा, "जी हाँ! बहुत भारी!" लेकिन उस के कहने का मतलब कुछ और था, मेरे उत्तर का भाव कुछ और।

शिन्दे आये। वे मुसकरा रहे थे। मुझे देखते ही बोले, "मैं एक खुशखबरी लाया हूँ। फर्स्ट क्लास मे नोटिस लगा है।"

हॅर्टा एकदम उठ बैठी। बोली, "कैसा नोटिस ?"

"जहाज कल सुबह आठ बजे बम्बई पहुँच जायेगा।"

उस का चेहरा फक् हो गया—"कल शाम को नही ?"

"नही, कल सुबह।"

मै रेलिंग के पास खडा था। शिन्दे ने मेरी तरफ देखा। मै ने सर की टोपी हवा में फेक कर कहा, "ब्रेवो! सुबह घर आयेगा!"

हॅर्टा गुस्से से लाल हो गयी। कुरसी से उठ खडी हुई और मेरी तरफ घूर कर देखने लगी। होठ भिंचे हुए थे। मुँह बिचका कर अभिवादन कर के मुझ से बोली, "थैंक यू वैरी मच फॉर यौर ईगरनेस!" मै भी तनिक उत्तेजित हो गया था। जवाब मे फिर अभिवादन कर के मै ने कहा, "प्लेजर, फ़ाउलाईन!"

इतना-सा कंकड। यों ही फेंका हुआ। लेकिन लग जाता है तो पछी को घायल कर के ही रहता है। उस चोट से जो पीडा उसे हुई वह दूसरे ही क्षण मेरी कल्पना मे साकार हो उठी। उस के व्याकुल स्वर का निनाद फिर मेरे मन मे गूँज उठा। सारा हर्ष विलीन हो गया। वृत्तियाँ स्याह पड गयी। उन की छाया मे उत्साह का बिरवा मुरझा गया।

प्रहार मै ने किया था। मेरा ही मन विषण्ण हो उठा। डसने के बाद साँप तक निढाल हो जाता है।

मै वहाँ खडा नही रह पा रहा था। एक तो वैसे ही कमज़ोरी थी, ऊपर से यह थकावट। किसी की तरफ ध्यान न देता हुआ मै केबिन की ओर चल दिया। अन्दर जाने के लिए मुड कर सीढियों पर कदम रखा ही था कि हॅर्टा की आवाज सुन पडी, "बॉब! बॉब! ओह् गॉड!"

मैं चौंका। मुड कर देखा। भण्डार-घर के एक कोने में आरामकुरसी पर हॅर्टा की माँ निढाल पडी थी। हिम-शुभ्र बाल। दुखो मे भुना चेहरा। झुर्रियों-भरी

देह, बहत्तर सर्दियों को झेल कर चुकी हुई। हॅर्टा पैताने बैठी थी। नही अपनी देह को उस ने वहाँ डाल दिया था। माँ की गोद में सर छिपा कर रो रही थी। अपने उद्‌गारो से उस ने मुझे पुकारा नही था। वह जानती भी नही थी कि मे पास ही था। बार-बार वह गरदन झुकाती और रो पडती। मै उस के पास गया। उसे पुकारा। उस ने मुड कर देखा।

हे भगवान्! यह हॅर्टा ही है! उस की आँखो मे परिचय नही था। दृष्टि दिशा-शून्य थी। पानी बह रहा था। वर्षा की मार से कोमल कलियाँ जैसे टूटने को हो जाती हैं, वैसी ही दशा उस के फूलते हुए नथुनों की हो गयी थी। और होठ? मेरा कलेजा टूट गया! वे टेढे हो-हो जा रहे थे! उस ने होठ हिलाये। मुश्किल से बोलने की कोशिश की। लेकिन शब्द निकल नही पा रहे थे। होठ खुल नही पा रहे थे। खुले तो घिग्घी-सी बँध गयी।

उस ने गरदन झुकायी। माँ की गोद मे मुँह छिपा लिया।

मै हतबुद्धि हो गया। गोली से घायल हिरनी जान की बाजी लगा कर दौडती है। उस का मन उसे दुःख से दूर भगना चाह रहा था। माँ का हाथ उस के माथे को सहला रहा था। उस की कमजोर जघाएँ, उन मे हॅर्टा के माथे को दबा रखने की शक्ति कैसे हो सकती थी?

हॅर्टा ने माँ का हाथ अपने माथे पर दबा रखने की कोशिश की। घुटनो को भीच कर गोदी मे छिपाने का प्रयत्न किया। पर वात्सल्य के दूध के सूखे हुए झरने से न तृप्ति होती थी, न आशा टूटती थी। हताश हो कर उस ने माँ की ओर देखा। शायद कह रही थी, "माँ, तू ने मुझे जन्म दिया तो नही जानती थी कि वह मुझे चाहिए या नही। पर अब रक्षा के लिए मुझे फिर पेट मे समा ले! इस दुनिया की हवा भी सही नहीं जाती!"

यही थी वह वेदना! उमा ने कहा था, "मन ने बहुत वेदनाएँ सही। देखते तो तुम क्षमा कर देते।" कर देता क्या? पर क्षमा करने के लिए मेरा मन ठिकाने कहाँ था? उस की ठीकरिया हो कर बिखर रही थी। फिर वे पास आती, जुड जाती। दुःख के नये आघात मे फिर बिखर जाती।

हुर्टा से क्या नही सहा जाता ? वियोग ? लेकिन वह तो अटल था। वह अच्छी तरह जानती थी कि डूब जायेगी, फिर भी वह क्या जान-बूझ कर ही स्नेह के दह मे नही कूद पडी थी·? केवल उस की अथाह गहराई से लुब्ध हो कर ? या इर्द-गिर्द की चाँदनी की मूक सुन्दरता से मोह कर ? एक ही मोह से। मन की आग पानी के पहले स्पर्श से बुझी तो उतनी ही बुझेगी। आगे कुछ भी हो ! सब सच है; पर प्राण देने का निश्चय करना एक बात है; और प्राण जाते समय होने वाली शरीर की छटपटाहट दूसरी।

उसे मै हर रोज देख रहा था। रात मे हँसती। दिन मे उदास एकाकी बैठी रहती। कार्ल की कहानी सुनते समय कुछ-कुछ समझने लगा था। वह उस की पहली प्रीति। निष्ठा के, सुविचारो के पाठ उस का मन बचपन से याद करता आया था। वही उस प्रीति का आधार था। कैसे कहूँ कि उस की भक्ति निष्ठा से वञ्चित थी ? उस के चरित्र से मै परिचित हो गया था।

लेकिन वह पहली प्रीति खो गयी। उस मे भी भयावह बात यह थी कि दूसरी का जन्म हुआ ! वही उस से सहा नही गया ! एक छोटे-से देश की सस्कृति की तहे उस के मन पर चढ गयी थी। वह समझती थी, प्रीति एक ही बार उत्पन्न होती है और मरती भी है एक ही बार। पर इतनी तहो के भीतर से भी उस का मूल नारी मन अपना रूप ले कर प्रकट हो गया। वह उसे पहचान नही पा रही थी। उस की पारे-जैसी अस्थिरता, बिजली-जैसी चंचलता, उस का चैतन्य उस से सहा नही जाता था ! सचमुच यह अपना ही स्वरूप है ! तो फिर वह मन कहाँ है, जिसे इतने दिन साँचे मे ढाल कर आकार दिया, पहचान रखा ? कहाँ है वह ? जो दूर खडा हो कर मुझे बेवफा, बेईमान कह रहा है, वही है क्या वह ?

सब सच है, पर क्या करती ? कार्ल के प्रेम की वे स्मृतियाँ ! हर रोज मन मे एक के बाद एक प्रकाशित होती तो तारिकाओ-जैसी जगमगाती थी। टूट गयी तो उन की उल्काएँ बनी। उन पत्थरो ने उसी से टकरा कर उस की कब्र बना दी। लेकिन उस का मन नही भरा था। नये प्रेम की फूँक से उसे संजीवनी प्राप्त हुई। उस ने नये संसार का निर्माण किया, नया आकाश खडा किया। लेकिन

वह भी अब टूट गया था। टूट कर उसी के ऊपर गिर पड़ा था। उस आघात से वह हतबुद्धि हो गयी।

दो घण्टे के बाद हॅर्टी मेरे केबिन मे आयी। शिन्दे और माईकेल बैठे थे। सामान समेटने का काम चल रहा था। मै ऊपर के बर्थ पर लेटा था।

उसे सकोच नही हुआ। झिझक भी नही। किसी की भी तरफ उस ने ध्यान नही दिया। मेरे बदन पर हाथ रखा और कहा, "यह क्या ? फिर बुखार आ गया ?"

मै ने करवट बदल ली। उठ बैठा। उस का हाथ हाथ मे ले कर बोला, "नही तो ! सिर्फ थकान की वजह से लेटा था।"

मुझे ताज्जुब हुआ। वह नये लिबास मे थी। हिम-शुभ्र महीन रेशम का फ्रॉक। उस पर गुलाबी फूल। कानो मे कुण्डल। आँखे चमक रही थी। चेहरे पर प्रसन्नता की चाँदनी बिछी थी।

उस ने कहा, "नही, नही ! थकने से काम नही चलेगा आज ! म तुम्हे सोने नही दूँगी रात मे !

शिन्दे ने एकदम कहा, "फाउलाईन, हम लोग यहाँ नीचे बैठे है ! आप भूल गयी हो तो बताये देता हूँ !"

वह हँसती हुई बोली, "आज मै किसी से नही डरती !" फिर मुडी। दरवाजे के पास पहुँचते ही रुक कर बोली, "बॉब, नौ बजे मै तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी डेक पर, याद रखना, हाँ !"

नौ बजे डेक पर जाने के लिए मै सीढियो की तरफ मुडा। हॅर्टी वही मिल गयी। उस के आग्रह पर पानगृह चलना पडा। बियर मँगवायी। परिचारक हस्ताक्षर के लिए रसीद ले आया। मै हस्ताक्षर करने लगा तो मुझे रोक कर हॅर्टी बोली, "ठहरो ! तुम्हे मद्य पीने के लिए मै ने बुलाया है। तुम मेरे मेहमान हो !" मै कुछ नही बोला।

परिचारक के जाने के बाद उस ने धीमे से पूछा, "नाराज हो गये ?"

मे ने उत्तर दिया, "नाराज़ होने की भी ताकत नही रही। लेकिन हॅर्टा, तुम ने बहुत बुरा व्यवहार किया मेरे साथ।"

"सच ? बताओ कैसे ?"

"ग्यारह दिनो मे तुम ने मुझ से कुछ भी नही लिया। जितनी सिगरेटें पी, उतनी वापस लौटा दी। कितनी बार मै ने पूछा, लेकिन कभी मेरे साथ मद्य नही पिया, और आज अपने पैसो से मुझे बियर पिलायी। लगता है, तुम एकाएक अमीर बन गयी हो ?"

उस ने ज़ोर से गर्दन ऊपर-नीचे हिलायी और कहा' "जी हाँ, बहुत अमीर बन गयी हूँ !"

मे ने खीझ कर पूछा, "मार्था की तरह ?"

उस ने गुस्से से देखा। बाँह को चिकोटी काटी और नाराज हो कर बोली, "एक बार कहा, यही बहुत हुआ।" फिर कुछ देर के बाद मृदु स्वर मे बोली, "बॉब, तुम कहते हो कि मै ने तुम से कुछ नही लिया। जो लेना था वह ले चुकी हूँ।"

पानगृह में आर्केस्ट्रा के स्वर गूँज उठे। मे कुरसी पर अच्छी तरह टिक कर बैठ गया। धीरे-धीरे जोडे नाचने लगे। धुएँ के बादलो की तरफ देखने मे मै मशगूल था।

उस ने ठोडी आगे की। झुक कर कहा, "थक गये हो ?"

"हाँ।" मै ने बस इतना ही कहा। वह झूठे गुस्से से बोली, "बॉब, तुम झूठे हो।"

मै ने जैसे अपने-आप से कहा, "सचमुच हूँ। तुम्हारे मन मे आशा उत्पन्न की और कल जा रहा हूँ।"

वह एकदम व्याकुल हो गयी। बोली, "चुप रहो, बॉब। इस विपय पर बातें बिलकुल बन्द। नही बोलोगे न ?"

मै ने धीरे से उत्तर दिया, "ठीक है, नही बोलूँगा। लेकिन तुम ऐसा क्यो कहती हो ?"

उस ने आर्केस्ट्रा की तरफ अँगुली उठा कर कहा, "पहचानो, यह सगीत कौन-सा है ?"

मैं ने कन्धे हिलाये। भोला बन कर बोला, "कुछ ध्यान मे नही आ रहा है।"

मेरे गाल पर प्यार से एक चपत लगा कर वह बोली, "झूठे कही के! यह वाल्ट्ज़ है। तुम जानते हो। व्हिआनीज़ वाल्ट्ज़्। और मैं यह भी जान गयी हूँ कि तुम अच्छी तरह नाच लेते हो।"

उस ने ही मुझे खीचा। उठाया। मेरा हाथ अपनी कमर के गिर्द डाला। अपनी अँगुलियाँ मेरे हाथ की पकड मे इस तरह डाल दी जैसे कालर मे फूल खोस दिया जाता है। पहली बार पाँव उठते ही बूटो की सडक मैं ने सुनी। बाद मे वह भी सगीत की माधुरी से मौन हो गयी! बाहर लहरे ताल दे रही थी। भीतर गीत की लय उठ रही थी। अनेक जोडे नाच रहे थे। जगह-जगह देह की लचक! कदम हलके हो गये। निगाहो पर कोहरा छा गया। कदम उठते तो साथ-साथ। हम दोनो एक हो गये, दूरी का एहसास मिट गया।

नृत्य की भिन्न-भिन्न गतें उभरने लगी। ट्रामबोन्स का आवेश बढ गया। वायलिन तेजी से थरथरा उठे। लय की उन बेशुमार लहरो मे हम डूबने-उतराने लगे। पहले उस का चेहरा घबराया हुआ-सा था। बाद मे होठो के कोने मे हलकी-सी मुसकान फैल गयी। उसे आभास हुआ होगा कि जहाज़ टूट गया, हम तूफान मे फँस गये। अब डूब जायेंगे" बाद मे सुगन्धित जल की नहर बह रही थी। उस की धारा मे वह बहने लगी। कमल के पात, पँखुडियाँ देह से चिपक गयी। बचपन की कहानी के एक सुन्दर राजकुमार ने उसे हौले-से अपनी बाँहो मे उठा लिया। महल की तरफ ले गया। रास्ते मे चरागाह के एक पौधे पर मकडी का जाल सन्ध्या की धूप मे चमक रहा था, वह उस मे उलझ गयी। उस मे से जब निकली तो उस के कोमल तन्तु देह से चिपके हुए थे। भीगी पँखुडियाँ छूटती, फिर चिपक जाती। उन शीतल चुम्बनो की वर्षा से अग-अग रोमाचित हो आया। समझ नही पा रही थी कि रोमाच कौन-से थे और तन्तु कौन-से!

महल मे अँधेरा था। राजकुमार का स्वर उसे सुनाई देने लगा। छत मे खूबसूरत फानूस लटक रहा था। राजकुमार की बातो से छलकते प्रेम की सत-रगी आभा फानूस मे से प्रकाशित होती चली गयी!

उस की आँखें गीली हो आयी। नीली आँखो की दो सुन्दर पुष्करिणियाँ!

सुहाने सपनो के नन्हे-नन्हे पछी वहाँ आये। जी भर कर पंख फडफडा कर डुब-कियाँ लगाते रहे। फिर बाहर आ कर विश्राम करने लगे।

फिर असन्तोष के स्वर बहने लगे। दोनो बाहर आये। सामने ही घडी थी। उस की तरफ देख कर वह बोली, "तोड दूँ इसे? कितनी तेजी से दौड रही है!"

ज़ीने के पास रुक कर मैं ने पूछा, "किधर जाये?" उस ने हताश हो कर कहा, "तुम्ही बताओ!" मै बता नहीं पाया। उस ने फिर कहा, "बताओ न बॉब! वक्त फिजूल बरबाद हो रहा है। कहाँ चलना है?"

आखिर वह खीझ उठी। "ऊब गये हो न तुम? तो ठीक है, जाओ। सो जाओ।" इतना कह कर वह मुड गयी। उस के बर्ताव का मतलब मै समझ नही पा रहा था। मै ने पुकारा, "हॅर्टा!"

वह उत्सुकता से मुडी। "क्या बॉब?"

"कुछ नही। गुड नाइट!"

मुँह लटका कर उस ने उत्तर दिया, "अच्छा गुड नाख्ट!" और एकाएक उस का चेहरा खिल उठा। वह मेरे पास आयी। बोली, "जर्मन में गुड नाख्ट कहते ही मुझे एकाएक याद हो आया। स्विट्ज़रलैण्ड के रेडियो पर हर रोज रात का कार्यक्रय समाप्त करते समय, गुडनाइट कहते है। बताऊँ, कैसे कहते है? गुडनाख्ट मनदामिन, गुडनाख्ट मनहेरन! श्लाफन्ज्वेल मिदनान्दर!"

मुझे हँसी आ गयी। वे जर्मन शब्द मुझे मन्त्रोच्चार-जैसे लगे। मै ने कहा, "है तो बहुत सुन्दर पर अर्थ मेरी समझ मे नही आया!"

"चलो, डेक पर चलें। वहाँ बताऊँगी।" यह कहते-कहते उस ने जल्दी से ज़ीने की सीढी पर पॉव रखा। फिर वही रुक कर बोली, "ओह! डियर! कितनी उमस है!"

मै ने उत्तर दिया, "मै डेक पर खड़ा रहता हूँ। तुम पानी मे कूद पडो!"

उसे हँसी आ गयी। मेरे कन्धे पर सिर टिका कर बालो से उस ने मेरी गरदन को, गालो को गुदगुदाया और कहा, "बॉब, अगर तुम हँसो नही तो एक बात कहूँ!"

मे ने पूछा, "क्या हंर्टा ?"

"हम तैरने जायेंगे ! चलोगे ?"

टैंक मे पानी हिल रहा था। रात के प्रतिबिम्बों को वह पकड नही पाता था। रेशम के पतले गाउन हम ने उतार दिये। दोनो के शरीर पर तरने की पोशाक थी। उस की पोशाक आसमानी रग की। हम सीढियो पर चढ गये। पहले वह पानी मे उतरी। हंर्टा की कान्ति मे पानी दमक उठा। उस की उछल-कूद बढती जा रही थी। हम दोनो एक-दूसरे का पीछा करने लगे।

टैंक के ऊपर बीचोबीच एक लकडी आडी टाग दी गयी थी। ज़रा थकावट महसूस होने पर उस पर पाव टिका कर मैं उतराता रहा। उस ने तैरते-तैरते पास आ कर मेरे सीने पर गरदन टिका दी और आँखें मूँद ली। बाल मेरे गले से लिपटे जा रहे थे। बीच मे ही वह बोली, "रात भर ऐसे ही सोया जाये !"

मैं ने हँस कर कहा, "जी हाँ ! सुबह न्यूमोनिया से मरना हो तो !"

"सुबह की सुबह देख लेंगे। मै ऐसे ही सोऊँगी। गुडनाइट, बाब ! स्लीप वैल !"

तभी मुझे याद आया। मै ने पूछा, "तुम वह अर्थ बताने वाली थी न ?"

"जी हाँ, बताती हूँ। गुड नाख्ट मनदामिन यानी गुड नाइट लेडीज, गुड नाख्ट मनहेरन यानी गुड नाइट जैण्टिलमैन; श्लाफन्ग्वेल मिदनान्दर यानी—"

पर उस ने मुझ से और भी सटने की कोशिश की। लजा कर बोली, "नही, नही बता सकती, बॉब !"

मैं ने उसे परे हटा-सा दिया। वह गिर पडी। पानी मे डूब-सी गयी। फिर ऊपर आयी। उस के हाथ मे मेरे पाँव पहले आये। अँधेरे मे सारे शरीर को टटोलते हुए उस के हाथ मेरे गले के पास आये। मुझ से लिपट गये।

रात के अँधेरे मे, कभी-कभी अपने होठो से मै उस के होठ खोजता और आखिर आवेग से वे मिल जाते। उस का टटोलना और गले से लिपट जाना मुझे वैसा ही लगा !

दिये की जोत बडी हो जाती है, बाती भडक उठती है। कांच तडकता है,

तब अजगर की सास की तरह आदमी को अपनी तरफ खीच लेता है। ऐसी उतावली मचता है कि जैसे वह एक बार ही सिर पर टूट पडेगा। उस ने चादर ओढ ली। वह चाहती थी कि ऐसी नीद आ जाये जिस मे सुबह होने का पता ही न चले। यह प्यार का फानूस ! सतरगी रोशनी के खेल से उसे लुभाने वाला ! लेकिन उस का टूटना अवश्यम्भावी था ? साँस रोक कर वह उस के टूटने की आवाज सुनने के लिए आतुर हो उठी। उस ने चादर ओढ ली और अँधेरे मे मुँह छिपा लिया।

लेकिन उस की आँखे अँधेरा नही, मदहोशी का धुँधलका चाहती थी। विचार ! विचार ! दस दिन पहले इसी तरह रात मे एक नयी दुनिया समुद्र के ऊपर निकल आयी थी। उस मे वह खेलती रही, जीती रही ! कितने आवेश से जीती रही ! लेकिन कल वह दुनिया डूब जायेगी ! फिर अपनी मौत ! बार-बार जीना, मरना ! आशाएँ अधूरी छोड कर आत्मघात के लिए तैयार होना ! फिर मन का पिशाच वैसे ही भटकता फिरेगा !

नही। आज पूरा फैसला हो जाना चाहिए। देव ने दोनो हाथो से सुख का प्रपात बहा दिया था। उस की धार मे मै जी भर कर नहायी। नही, जी भर कर नही ! अभी तक चाह बाकी है, अभी तक धार बह रही है ! अब सिर्फ छह घण्टे ! जहाँ मेरी पुकार पहुँच सकती है, नही, नही, मेरी फुसफुसाहट तक पहुँच सकती है, बस इतने ही अन्तर पर मेरा प्रेमी है ! यह अन्तर किस ने रखा ? मै ने ही न ? साथ-साथ नाची तब सगीत से सुधबुध खो बैठी। साथ-साथ तैरती रही तब पानी की लहरें बीच मे आ गयी। मधुर चुम्बन भी उन्होने बदजायका कर दिये !

अभी वक्त बीता नही है। इसी क्षण, प्रत्येक आगामी क्षण उस के निकट रहूँगी। उस के साँवले शरीर से ऐसे लिपट जाऊँगी जैसे रात मे चाँदनी फैलती है। उस के स्पर्श से इस हाड-मास की देह की जडता नष्ट कर दूँगी।

चादर फेंक कर वह उठी तो घुटने को कुछ खुरच गया। उस ने टटोल कर देखा। खून झलक आया था। उस ने बत्ती जलायी। लेकिन जलाते ही तुरन्त बुझा दी। एकाएक देह पर वस्त्र न होने का एहसास हो आया ! ऐसे ही उस के कमरे मे कैसे जाये ? कितनी जकडन, कितने बन्धन ! सब तरफ से जकडे जाने

की भावना बढ गयी । सोच रही हूँ, पर अब सोचने के लिए भी वक्त है क्या ? लहरें अट्टहास करती हुई पीछे जा रही है। घडी की सुइयाँ दौड रही है ! वियोग का क्षण मेरी तरफ जी तोड कर दौडा आ रहा है। और मै बन्दिनी ! सुख का थाल सामने पर हाथ जकडे हुए ! मुँह मे कपडा ठँसा हुआ ! सब जगह यही । बर्लिन मे कार्ल स्टेशन पर था, लेकिन जासूसो के डर से उस ने उसे पहचाना तक नही । पोर्ट सईद नहर मे जहाज खडा था । किनारा एक छलाग के फासले पर । लेकिन पैलेस्टाइन की धरती को पाँव न छू सके ! सामने धरती । कितनी पास ! लेकिन कितनी दूर ! आज फिर वही ! अपनी देह को उस ने झकझोर-सा दिया । उसे लगा जैसे उस ने बेडियाँ तोड दी हैं । इस का यह एहसास बढता ही गया ।

छोटा-सा केबिन । अन्दर दम घोटने वाली हवा । घुप अँधेरा । केबिन नही, जैसे जेलखाने की कोठरी हो ! सामने पोर्टहोल था । बाहर लहरो का खेल जारी था । पल-भर मे एक कल्पना कौध गयी । उस ने सब बन्धन तोड दिये । खिडकी में से कूद पडी । मुक्त हो गयी । भाग गयी । सुख के काचनमृग का पीछा किया । उसे पकड लिया !

वह बर्थ से नीचे उतर गयी थी । नीचे के बर्थ पर सोई हुई माँ । उस की तरफ ध्यान जाते ही हॅर्टा का धीरज जाता रहा । खडे-खडे ही उस ने ऊपर के बिस्तरे पर सिर टिका दिया । अपराध का तीव्र अनुभव उसे हुआ । उस ने अपने-आप को धिक्कारा ।

सपना आ रहा था । वह कैदी थी । न्यायालय मे अपराधी के रूप में खडी थी । आसन पर बैठा था विवेक । उस ने क्रुद्ध स्वर मे पुकारा, "कैदी—"

उस ने सर ऊपर नही उठाया ।

"कैदखाने की खिडकी से कूद कर तुम्ही भागे थे न ?"

"जी हाँ, महाराज !"

"देखा नही था कि वह खिडकी जमीन से कितनी ऊँचाई पर है ?"

"नही, महाराज ! सिर्फ बाहर के जीवन की अथाह गहराई नजर आ रही थी ?"

"और खाई का पानी ? उस का तुम्हे डर नही लगा ?"

"उस मे मछलियाँ खेल रही थी। वे उछलती और फिर नीचे चली जाती। मैं ने सोचा, डर बेकार है।"

"तुम भाग न सको इसी लिए सगीनें ले कर पहरेदार वहाँ खडे थे!"

"उन मछलियो पर रोशनी पड रही थी। वे चमक रही थी। मानो अंगुली से मुक्ति का मार्ग दिखा रही हो! बाहर बुला रही हो!"

पल-भर को खामोशी छा गयी। दण्ड की आशंका मे वह काँप रही थी। फिर पुकार आयी, "कैदी!"

उस ने सर ऊपर नही उठाया।

"जाओ, तुम मुक्त हो!"

वह रुकी नही। सर उठाया। पाँवो मे सैण्डल पहने। देह पर गाउन ओढा। निश्चिन्त हो कर दरवाजा खोला और बाहर निकल गयी।

माँ गहरी नीद मे थी। उस ने करवट बदली। नि श्वास छोडा। बेटी के कार्य का वह विवश निषेध था? या विचारो के तूफान मे बच कर हॅर्टा किनारा पा सकी इस का सन्तोष? या कही मातृत्व की शक्ति को खो बैठी एक नारी का दूसरी को आशीर्वाद तो नही था!

उस ने परदा सरकाया। भीतर पाँव रखा। मै जाग रहा था। केबिन मे कोई नही था। होता भी तो वह शायद ही परवाह करती।

उस के आगमन से मैं चकित हो गया। इतना-भर बोल सका, "हॅर्टा?"

"हाँ, मै ही हूँ। अभी-अभी मैं ने तुम्हे आधा अर्थ बताया था न? अब पूरा बताने आयी हूँ।"

कपडे की आलमारी से टिक कर वह खडी रही। मै कुछ बोल नही पा रहा था। घूर कर देखते हुए वह आगे बोली, "श्लाफेन्ज्वेल मिदनान्दर का अर्थ क्या है, जानते हो? एक-दूसरे की बाँहो में सुख की नीद सोओ।"

उस ने कह डाला। बात समाप्त होते ही होठ भीच लिये। शायद उसे लग रहा था कि आवेग कम हो गया तो पाँवो मे ताकत नही रहेगी, वह गिर पडेगी। हाथ उस ने पीछे के आईने से टिका रखे थे और निर्निमेष दृष्टि सें मेरी तरफ देख

रही थी। उस का उन्माद देख कर मैं स्तम्भित रह गया, भक्ष्य की भाँति।

कुछ देर के बाद उस ने पूछा, "तुम चुप हो, बॉब ?" वह नींद में नहीं थी। लेकिन उस पर उन्माद सवार था। जरा सहमे हुए स्वर मे मैं ने उत्तर दिया, "हॅर्टा, यह क्या कर रही हो ?"

उस ने बाँहों को भींच लिया। मेरी तरफ देखते हुए बोली, "बस करो अपनी सावधानी! मैं जानती हूँ, तुम क्या कहोगे ? 'यह अच्छा नहीं, लोग क्या कहेंगे ?' कौन-से लोग ? जर्मनी के, या इजिप्ट के, या हिन्दुस्तान के ? इन में से किसी भी देश मे मेरे लिए जगह नही। तुम्हारा अपना समाज है, लोग हैं, उन की नीति है। मैं कही की न रही! मेरा कोई नही है। तुम्ही बताओ, कौन-सी नीति का मैं पालन करूँ ? चार दीवारें हो, घर हो तो कपडे पहन सकते है। लाज ढक सकते है। लेकिन तूफान मे फँसा हुआ इनसान अपने-आप को कितना बचाये, कैसे बचाये ? साँय-साँय कर के बहने वाली हवाएँ और ऊपर से लहरो का क्रूर ताण्डव। हड्डियाँ तक ढीली पड कर टूट जाती है। ऐसे मे बदन का कपडा फट कर तार-तार हो जाने पर आप लज्जा और मर्यादा का उपदेश देंगे ?"

लेकिन वह एकदम रुक गयी। उसे एहसास हो गया था कि सारी ताक़त खत्म होने से पहले ही टूट पडना है। भावनाओं का वेग दुर्निवार हो गया। गरदन, कन्धे, छाती समूची देह मे ही जूडी बुखार की कँपकँपी-सी हो आयी।

उसे दबा रखने का यत्न करते हुए उस ने कहा, "कुछ माँगने आयी हूँ, बॉब! जैसे तुम ने अपनी आँखों मे मुझे देखा, अपनी दृष्टि से मेरी देह को सहलाया—"

लेकिन उस से कहा नही गया। उस ने ड्रेसिंग गाउन महज़ ओढ रखा था। झटके से उसे नीचे गिरा दिया। वह खडी थी पत्तो के परदे को चीर कर निकले मकई के रसदार भुट्टे की भाँति।

उसी समय उस की दृष्टि पहली बार विचलित हुई। उस ने निढाल हो कर गरदन नीचे की। घूम कर पीछे टिक गयी। हाथ छोड दिये और व्याकुल स्वर मे बोल उठी, "ओह! गॉड!"

परदा हवा से बेतहाशा हिल रहा था। मेरे दरवाजा बन्द करते ही वह थम

गया ! लेकिन आईने की चौखट के सामने उस की अनावृत देह काँप रही थी। तूफान रुका नही था।

बर्थ पर छोटी-सी बत्ती जल रही थी। बगल से आने वाली रोशनी मे उस की देह का कंचन दमक रहा था। मेरी दृष्टि बंध गयी। हृदय को छूने वाले अनुभव का जब साक्षात्कार होता है, तो वृत्ति पहले चित्रकार-जैसी बनती है। रंग, रेखाएँ, छाया और प्रकाश वैसे ही दिखाई देने लगते है। फिर कल्पना सान पर चढती है।

वह तसवीर थी या देह ? नही, देह नही। तसवीर ही। लेकिन आज की या कल की ? आज की तसवीरो की जान यानी छाया-प्रकाश का खेल ! पर उस परावर्तित प्रकाश मे आवेश की धार थी। आधी देह छाया की बनी थी। उस छाया मे समर्पण की विवशता थी, आर्द्रता थी ! क्या यह तसवीर आज की है ? कल की कहूँ तो कितनी सादी ! सतही सुन्दरता का झूठा बडप्पन नही। रंगो की आपाधापी नही। सीधी-सादी आईने की चौखट। काँच की पृष्ठभूमि और सामने सुन्दर स्फटिक की सजीव मूर्ति। नही। आज की नही, कल की भी नही, जब मे मानव-जाति इस धरती पर है तब मे हर युग की, हर क्षण की समर्पणोत्सुक नारी देह की तसवीर है यह !

गीले बाल चिपके हुए थे। केवल एक लट माथे पर उतर आयी थी। उस ने प्रश्नचिह्न खडा कर दिया था ! प्रीति के आवेश का वह आह्वान कितना मादक होगा ! गले मे मोतियो की माला थरथरा रही थी। देह पर रोमाच, जैसे दीप्ति के मोह से ज्योति पर कूदने वाले पतिंगे फडफडा रहे हो ! और नाभि से निकली त्रिवली के रक्तवर्ण रोम ! देखते-ही-देखते वे गुलबकावली के फूल बन गये। मेरी अन्धी वासना को उन्होने दृष्टि दी।

स्त्री की देह मेरे लिए अनोखी चीज नही थी। पिछले दो साल मुझे याद हो आये। भगवान् को साक्षी रख कर आप को सच-सच बताता हूँ। लन्दन मे था तब रात को पिकैडिली मे चक्कर लगाता। दूकान मे बैठता तो भी शीशे के दरवाज़े मे से बाहर देखता रहता। बेशुमार भीड मे भी ठीक वेश्या पर ही नजर जाती। पुलिस की नजरो से छिप कर वे चक्कर लगाती। मै उन का पीछा करता।

लेकिन परिचित लडकियों के पास मे दोबारा कभी नही जाता था। गला फँस जाने के डर से प्राय सब अजनबी मुसाफिर यही करते हैं। लेकिन मेरा मतलब कुछ और हुआ करता। मैं खीझ उठता था। एक ही स्थान पर दोबारा जाने मे निष्ठा उत्पन्न होने का भय मन में रहता था।

लेकिन दो साल पहले की ही बात क्यों? हाल ही की पैरिस की रातें मुझे याद आती हैं। नाचघर, थिएटर, कैबरेज, अनेक होटल, सब जगह स्त्री के नग्न सौन्दर्य का बेशुमार प्रदर्शन देखा था मैं ने। अन्तत· चार हिन्दुस्तानी दोस्तो के साथ चकले में भी गया। वहाँ तो हद हो गयी। एक बडा दीवानखाना, हरी नीली बत्तियों की हलकी-सी उन्मादक रोशनी। दीवारों पर, छत पर, फर्श पर, टेबुल पर जगह-जगह बडे-बडे आईने। उन के बीच सौ-पचास वेश्याओ का हुड-दंग। उन की नग्न देहों के सैकडो प्रतिबिम्ब आईनो मे दिखाई देते। शराब की नदियाँ बहा करती। पुरुष की कल्पना, आशा तथा लालसा के तरल रस को ढाल कर उन मूर्त्तियो के सौन्दर्य का निर्माण किया गया था। मानो वे तमाम रस पिघल कर दीवारों पर से, फ़र्श पर से, छत पर से बहते रहते।

S के आकार की रेखा चित्र-रचना मे अत्यन्त सुन्दर मानी जाती है। स्त्री की आकृति उस सुन्दरता का जीवन्त विलास है। किन्तु उन स्त्रियों के शरीर देख कर मुझे घृणा हो आयी। लगता था कि पुरुषो की वासना के प्रहार से उन के शरीर पर जगह-जगह केवल सूजन है। बाल नोचती और बदन खुजलाती हुई वे घेरा डाल देती। पुरुषो की विकृत वासनाओ की उन घिनौनी नग्न साक्षियो को होश मे रह कर देखना तक मुश्किल हो जाता है। इसी लिए वहाँ शराब की नदियाँ बहती है।

मै बाहर निकल आया। गाइड फ्रान्सीसी था। उसे एक सिगरेट दी और कहा, "हेनरी, यही स्त्री की सुन्दरता है?"

उस ने हँस कर जवाब दिया, "मौस्ये, यही लडकियाँ कपडे पहन कर सामने आती, सडकों पर घूमती तो आप मुड-मुड कर देखते!"

मै ने कहा, "लेकिन लोग मजा लूटने की उम्मीद ले कर यहाँ आते कैसे है?"

उस ने धुआँ छोडते हुए कहा, "जैसे हम आये है।"

"पर जैसे हम लौट रहे है वैसे वे भी लौटते हैं ?"

"इनसान रहे हो तो लौटते है। शराब पी कर जानवर ही बन जायें तो नही लौटते !"

उस के लहजे से मुझे ताज्जुब हुआ। मै ने पूछा, "हेनरी, तुम गाइड का काम करते हो। तुम चिढते क्यो हो ?"

उस ने गरदन हिला कर उत्तर दिया, "मौस्ये, यहाँ आ कर, इन लडकियो की तरफ देख कर, इन की लपलपाती जिह्वाओ को देख कर घृणा हो आती है, मन खीझ उठता है, औरत से नफरत हो जाती है ! क्या जात है ! मुझे विश्वास ही नही होता कि मै इन्ही मे से किसी एक के, अपनी माँ के पेट मे पैदा हुआ हूँ !"

मै ने मुड कर पीछे देखा। दरवाजे मे से वे लचकती, बलखाती, अश्लील हरकते करती नजर आ रही थी, मानो शीशे की आलमारी मे रखी नागिने हो ! जहरीली मगर नजर बाँध देने वाली !

मेरी अनुभवी आँखो मे हॅर्टा की इस अवस्था का क्या महत्त्व था ? आखिर इस आकर्षण में इतना क्या है ? स्त्री की देह ? रक्त-मास की मिट्टी में नये पौधो को पालने-पोसने के लिए हमेशा तैयार दुनिया के बगीचे का एक गमला है यह ! पर उसी के इर्द-गिर्द पुरुषो के सुहाने सपनो की तितलियाँ मँडराती है !

और उसी देह में प्रेयसी के आत्मसमर्पण का असीम आवेग ! उस धारा में न बहना शक्य नही है। लेकिन मुझे आश्चर्य हुआ। असह्य मानसिक तनाव के कारण हॅर्टा बेहोश हो गयी। आलमारी के पास ही वह नीचे गिर पडी तो जैसे मुझे होश आया। मै फौरन उठा।

उसे हौले से उठा कर बर्थ पर लिटाया। नवजात शिशु-जैसी लग रही थी वह वहाँ लेटी हुई।

■

छह

सब पत्रो पर जहाज की मोहरें लगी हैं। वे प्रवास मे लिखे गये हैं। रास्ते मे आने वाले बन्दरगाहो से भेजे गये हैं। जिस क्रम मे वे आये उसी क्रम से आगे रखता हूँ। उन का अनुवाद मैं ने स्वयं किया है।

(१)

बम्बई और कोलम्बो के बीच
—सितम्बर १९३९

बॉब, चले गये न तुम सब आखिर ?

सब चले गये और पीछे रहने वालो के लिए दु:ख छोड गये। हेर काइटेल अपने नोटबुक बन्द कर बैठे है। अँगरेजी सीखने का उन का उत्साह फिलहाल तो कम ही हो गया है। वे कहते है कि मि० विश्वंम अँगरेजी बहुत अच्छी तरह पढाते थे।

मि० ओखापल की याद है तुम्हे ? तुम लोगो के साथ एक ऐंग्लो-इण्डियन लडकी थी। उस की आवारगी का तुम मजाक उडाया करते थे। लेकिन उस का व्यवहार देख कर ही तुम ने मुझे पहली बार अपने पास खीच लिया था। ओखापल के साथ उस का सम्बन्ध सिर्फ आवारगी का नही था। उन दोनों ने शादी तय की थी। वह चली गयी। अब ओखापल हमेशा बार में बैठे रहते है। किसी से बात नही करते। लगातार शराब पीते रहते है।

तुम्हे कभी लुई की याद आती है ? जिन के लिए उस ने अपने जर्मन होने का अभिमान भी तज दिया वे उस के 'अंकल' शिन्दे भी उसे छोड कर चले गये ! अब वह बीच मे ही माँ से कहता है, "मुटी, आई लाइक इंगलिश, वैरी मच ! मुटी, तुम कहो न, बेबी, आई लाइक यू !"

डॉक्टर शिन्दे की याद आते ही दिल भर आता है। हम सब के प्यार पर अपेक्षा का दाग लगा था। लेकिन उन्होंने लुई को इतना चाहा, उस के पीछे भला कौन-सा स्वार्थ था ? जिस रात हम दोनों अपनी सुध बिसर गये थे उसी रात उन्होंने लुई को गोद लेने की बात उस की माँ से की। वह उसे छोडने के लिए तैयार नही थी। तब उन्होंने दोनों का पालन करना स्वीकार कर लिया। सब तय हुआ। उन्होंने बम्बई मे दिन-भर कोशिश की।

लेकिन सब व्यर्थ। जो उत्तर तुम्हे दिया गया था वही उन्हे भी मिला। 'टाइम्स' मे काली रेखाओ की चौखट मे बडे-बडे अक्षरों में छपा शीर्षक तुम ने मुझे दिखाया था, वह बार-बार आँखो के सामने आता है। तुम्हारी-हमारी आशाओ का मृत्यु-लेख ही था वह! 'ब्रिटेन इज ऐट वार विथ जर्मनी!' हमारे पास जर्मन पासपोर्ट है इस लिए हम जर्मन नागरिक हैं, दुश्मन है! हिन्दुस्तान के दरवाजे हमारे लिए बन्द हो गये!

बॉब, कल हम सब दोस्त थे! आज दुश्मन बन गये! दस दिन प्रीति के खेल खेले समुद्र के आँगन मे। आज सब रणागन हो गया! युद्ध युरॅप मे शुरू हुआ है। मै जर्मनी से छुटकारा पा चुकी हूँ लेकिन युद्ध से छुटकारा पा सकी या उस मे फँस गयी ? जर्मनी मे होती तो कभी न कभी हवाई हमले मे जरूर फँसती। एक बार ही मर जाती! मगर अब तुम्हारे वियोग मे हर क्षण मृत्यु की यन्त्रणा सहनी पडती है!

क्या सचमुच हम एक-दूसरे के दुश्मन है ? परसो परिचय तक न था, कल दोस्त बने और आज दुश्मन! हम दोनो के प्यार से भी यह खेल कितना अप्रत्याशित है! तुम ब्रिटिश नागरिक तो हो। मैं जर्मन नागरिकता खो बैठी हूँ। हम दर-ब-दर ठोकरें खाते घूम रहे है। फिर भी हम दुश्मन!

पर यह सच है कि मै जर्मन हूँ। और रहूँगी भी जर्मन ही! कलेजा मुँह को आता है। वे खूबसूरत चरागाह अब जल कर खाक हो जायेंगे। शीतकाल नही है लेकिन फिर भी उन की बरबादी क्यो हो रही है यह रहस्य जंगल के पेडो की समझ मे नही आयेगा! तोपो की गडगडाहट से जर्मनी का सुन्दर आकाश दहल जाता होगा, धरती काँप जाती होगी!

आखिर हम क्या करें ? नाजी कहते है कि यहूदी राष्ट्र-द्रोही हैं। इस जहाज मे सफर करने वाले यहूदी कहते है कि मौका मिला तो वे ब्रिटिश फौज मे भरती हो जायेंगे, जर्मन नाज़ियो के खिलाफ लडेगे।

मतलब यह है बॉब, हम जर्मन, जर्मनो के खिलाफ लड़ने की बातें करते हैं। है न हम घर डुबो देने वाले ? हम क्या चाहते हैं ? जर्मनी की जीत या हार ! जर्मनी की जीत नाज़ियो की जीत है ! अत्याचार और प्रतिशोध की, प्रजातन्त्र का गला घोंट देने वाले दर्शन की जीत ! जर्मनी की हार यानी मेरे देश की हार ! क्या स्वीकार करूँ ? तुम्ही बताओ ! सिद्धान्त श्रेष्ठ या देश ?

कम्युनिस्ट यही चाहते हैं कि मजदूरो पर बहुत अत्याचार हों ताकि वे निराशा के आवेश मे आ कर विद्रोह के लिए तैयार हो जायें। मैं चाहती हूँ, दुनिया-भर मे फेले हुए देशाभिमान के संकीर्ण बन्धन टूट जायें। नाजीदर्शन देश-देश में फैल गया तो अल्पसंख्यको पर अत्याचार किये जायेंगे, उन्हे देश-विदेश मे ठोकरे खाते घूमना पडेगा। धीरे-धीरे 'यह अपना देश है' की भावना भी उन की भावी सन्ततियो मे बाकी नही रहेगी। सारी दुनिया ही मानव-जाति की मातृभूमि होगी। मेरी माँ पोलैण्ड की है। मेरा जन्म बर्लिन में हुआ। मेरे बच्चे शाघाई मे पैदा होगे। नानी पोलैण्ड को, माँ जर्मनी की और खुद चीन में पैदा होने वाले, वे बच्चे किस देश के लिए लडेंगे ?

लेकिन दूर के सुहाने सपने के लिए भी आज हिटलरशाही की जीत न हो। मेरा देश हार गया तो भी कोई बात नही। पर जीत के नशे मे चूर तानाशाही का भयानक ताण्डव दुनिया भर मे शुरू हो गया तो वह पाप कल जर्मनी के ही—मेरे ही देश के मत्थे मढ दिया जायेगा न ?

और मेरा तो यह विचार है कि युद्ध-पिपासु हिटलर के विरुद्ध हम नारियों को ही लडना चाहिए ! वह हक हमारा ही है। आज की सभ्यता ने नारी से वैर को जन्म दिया है। एक ही पीढी मे दो-दो युद्ध ! राष्ट्रो का वैभव आज युद्ध की शक्ति पर, संहार की शक्ति पर, इनसानो को मार डालने की शक्ति पर निर्भर है। हम नारियों का वैभव निर्माण की शक्ति पर, इनसानो को पैदा करने की शक्ति पर आधारित होता है ! डॉक्टर शिन्दे के प्यार-भरे पालन से लुई वंचित रहा ! ओखापल के या तुम्हारे और मेरे प्रेम-विवाह से जन्म लेने वाले बच्चे

अज्ञात रह गये ! मैं, लुई की माँ, और यहाँ होती तो वह ईसाई युवती, हम सब युद्ध के विरुद्ध एक हो जाते। कल जो फौज मे भरती हुए अपने बाप, भाई, प्रेमी या पति को खो बैठेंगी ऐसी संसार-भर की समस्त नारियो का इकट्ठा होना और तानाशाही के विरुद्ध लडना क्या असम्भव है ?

बॉब, अगर मैं ब्रिटिशो की तरफ से लडना चाहूँ तो मुझे वे फौज मे भरती कर लेंगे ?

—हॅर्टा

(२)

कोलम्बो-सिंगापुर

कल सोचा करती, दुनिया-भर मे आग भडक उठी है। अब व्यक्ति के सुख-दुःख की क्या कीमत ?

जहाँ अन्दरूनी चोट लगती है वहाँ दूसरे ही दिन ज्यादा दर्द होने लगता है। लिख तो दिया तुम्हारे और अपने प्रेम-विवाह के बारे मे। लेकिन अब विश्वास भी नही होता।

तडके तुम उठे, मुझे डेक पर ले आये और बोले, "हॅर्टा, सोचता हूँ कि तुम से ब्याह कर लूँ।" स्वर्ग मेरे चरणो मे गिर रहा था। शांघाई से वापस लौटने की आशा पैदा हुई। मै विश्वास भी न कर सकी। कुछ देर तक हर्ष से सुध-बुध खो बैठी !

बॉब, याद है न पहला दिन ? तुम ने मुझे अपनी बाँहो मे लिया और फिर तुरन्त पश्चात्ताप से दूर हो गये। मुझ से बोले, "यह कब तक चलता रहेगा, हॅर्टा ? इस का कोई अन्त नही। मै तुम से ब्याह नही कर सकता।"

तभी मै ने तुम से कहा था। प्रेम के खेल मे मन जिस सुख-सीमा पर पहुँचता है वही अन्त मेरे लिए काफी है ! मेरा जीवन लम्बी अँधेरी रात बन गया था। तुम्हारे प्रेम की घडियाँ उस मे प्रकाश की किरणें बन कर आयी। उतने ही पर मैं मुग्ध रही, सन्तुष्ट रही।

फिर उस दिन सुबह तुम ब्याह के लिए तैयार क्यो हो गये ? तुम्हारा प्रिय सिद्धान्त मैं जानती हूँ। स्त्री पुरुष का शिकार करती है। सब यत्न विफल हो

जाने के बाद वह उस के रास्ते मे मोह का जाल बिछा देती है। उस से अपने प्रति अपराध करवाती है। उस अपराध का जब उसे एहसास होता है तो प्रायश्चित्त करने के लिए पुरुष हर त्याग करने को तैयार हो जाता है। स्त्री के बस मे हो जाता है।

जाते समय भी तुम ने मुझ से माफी माँगी। क्यो ? तुम ने मेरा क्या अपराध किया था ? उस रात भी तुम ने ही मुझे सम्हाला, गिरने से बचा लिया! बॉब, मुझ से ब्याह करने के लिए तुम तैयार हुए, किस प्रायश्चित्त का भाव उस के पीछे था ?

बर्लिन मे थी। एकाकीपन असह्य हो जाता। तब मै शतरज खेलती। सामने की खाली कुरसी मेरी प्रतिद्वन्द्वी बन जाती। उस के मोहरो को मै सरकाती। अपने भी मैं ही सरकाती। कई बार तो मैं ही हार जाती। हमारा खेल भी इसी तरह एकतरफा था न ? मै ने ही प्यार किया। तुम से भी करवाया। मै ने देखा कि तुम स्त्री को जानते हो। यह भी जान गयी कि उस के तिरस्कार का नाटक खेलना तुम्हें पसन्द है। मेरा आकर्षण असीम था। मुझे मालूम था कि उस ने तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध तुम्हे मेरी तरफ खीच कर धारा मे बहा दिया है। तुम मुझे चाहते नही थे तो ब्याह के लिए क्यो तैयार हो गये, बॉब ? सिर्फ मुझ पर तरस खा कर ?

बॉब, मुझे दया की भीख नही चाहिए। आसरे की भी मुझे कोई ज़रूरत नही। मि० मन्नान शादी के लिए आखीर तक मनाते रहे। तुम्हारे ऊपर वे बहुत गुस्सा होते। हमारा सम्बन्ध उन से सहा नही जाता था। उन से ब्याह करने के बाद आनेवाले सुख के दिनो के रगीन चित्र वे लगातार खींचते रहते। मुझे उन पर गुस्सा नही आता था। लेकिन जी ऊब जाता। मै ने इनकार कर दिया।

तुम न मिलते तो न जाने क्या करती ? उन का स्वभाव बहुत प्यार भरा है। महत्त्वाकाक्षी है। एडन के बाद उन्होने मेरी और माँ की कितनी देखभाल की! एक दिन तो मै होश में नही थी। वे फल ले आते, खाने के लिए आग्रह करते, और मै कहती, "बॉब, मुझे फल नही चाहिए। थोडी-सी ब्रैण्डी पिला दो।"

लेकिन उन को गुस्सा नही आया। मेरी परिचर्या नही छोडी। कितना जहर पिया होगा ? उस रात विदा लेने के लिए वे हमारे केबिन मे आये। मुझ से कहने लगे, "फ्राउलाईन, आप को मेरी कसम। जो कुछ मे कहूँगा, उसे जैसा का तैसा जर्मन मे अपनी माँजी से कह दीजिए।" मै जानती नही थी। वचन दे दिया।

माँ अँगरेजी बिलकुल नही जानती। वह उन के चेहरे की तरफ देख रही थी सिर्फ—उन का गला भर आया। उसी आवाज मे उन्होने कहा, "माँजी, मै अकेला हूँ इस दुनिया मे। माँ नही, बाप नही। मेरे पास घर है, धन-दौलत है। कैसे बताऊँ कि आप की बेटी को मै कितना चाहता हूँ ? उसे मेरी बीवी बनने के लिए कह दीजिए। आप हम दोनो की माँ बन जाइए!"

मेरा दिल भर आया। वे भी रो रहे थे। मुझ से कुछ कहते नही बनता था। माँ बेचारी हतबुद्धि हो गयी! हम दोनो नृत्य करने गये थे न ? उस से पहले की बात। माँ से मेरा थोडा-सा झगडा भी हुआ!

उन के सपने इस्लाम के गौरव के है। वे उस दिन की बडी आतुरता से प्रतीक्षा करते है जिस दिन हिन्दुस्तान मे एक भी हिन्दू बाकी नही रहेगा। उन से शादी करती तो कल अपने बच्चो को हम तुम्हारे बच्चो से नफरत करना सिखा देते!

लेकिन नही, मुझे इस तरह सोचना भी नही चाहिए। तुम मुझे मिले न ? इन दस दिन की यादो के सहारे मै बहुत दिनो तक जी सकूँगी।

—हॅर्टा

(३)

सिंगापुर—मनीला

बस, बॉब! मन आखिर कितना सहे ? मै तुम्हे चाहती हूँ। तुम नही मिलते। मेरा मन विदीर्ण हो जाता है!

यही सजा मिलनी चाहिए। मै पापी हूँ। अपराधी हूँ। पता भी नही था कि तुम कौन, कहाँ से आये हो। आये और चल भी दिये। मै ने तुम से प्यार किया। लोक-लाज तज दी। आखिर मन की लाज भी छोड दी। कार्ल की

प्रीति का गला घोट दिया। इस से बढ कर और क्या अपराध करूँगी ? मेरे लिए यही सजा चाहिए।

सुस्थित, सुरक्षित जीवन जीने वाली मेरी बहनें मुझे क्षमा करें! बेचारी भाग्यवान् है वे। उन की प्रीति का ध्रुव अचल रहता है। भक्ति का देवता भ्रष्ट नही होता। निष्ठा को निरन्तरता का वरदान प्राप्त रहता है! मै नारी ही हूँ न ? भला मै ने ऐसा क्यो किया ?

बॉब, मे तूफान मे फँसी असहाय नारी हूँ। वृक्ष टूट कर गिर पडता है, लेकिन उस के साथ लता हमेशा नही उखडती। मगर मै तो जड़-मूल से उखाड दी गयी हूँ। हम स्त्रियाँ छिछले मन की होती है। लेकिन स्वार्थ के विषय मे बडी सतर्क रहती है। और प्रीति का दान तो दूसरे के तन-मन-धन की तुला लेकर ही करती है! मुझे याद है। जब से होश सम्हाला तब से मे कई बार आकर्षित हुई। हमारे सामने एक तमाखू की दूकान थी। वहाँ के लडके की हँसी बडी प्यारी थी। लेकिन बातें एकदम बेवकूफी-जैसी! एक डॉक्टर घर आया करते। डीलडौल बड़ा, हमेशा गम्भीर, लेकिन काम मे बहुत ही कुशल। बडे शक्तिशाली लगते। लेकिन उन मे ज़रा-सी भी भावुकता नही थी! बर्लिन मे मेरे कॉलेज मे एक दिन नये प्रोफेसर आये। हँसमुख, बुद्धिमान् और बडे विद्वान्। लेकिन उन के मन को मानो लकवा मार गया था! किताबो के बाहर की दुनिया का क ख भी नही जानते थे।

सब के साथ मै खेली, घूमी, फिरी, नाची, कूदी। भौरा फूलो मे रमता है पर घर बनाता है लकडी के मजबूत शहतीर मे! कार्ल मिला। उस का शानदार व्यक्तित्व, बातें करने का आवेश, पैना विनोदशील स्वभाव, सब ने मुझे मोह लिया। उस के स्वर में धार थी। हास्य उन्मुक्त। वह होशियार था। विद्वान् नही था, लेकिन समर्थ था। उस के हाथो मे मै ने अपने को सौंप दिया और भविष्य के बारे मे निश्चिन्त हो गयी।

उस के बाद प्रलय मचा। हमारे घर मटियामेट हो गये। सपने खाक मे मिल गये। अत्याचार, अपमान, उपहास, जुल्म सब की हद हो गयी! सुख के खुले मैदान मे जी-भर कर उछलने-कूदने वाला मन का बछडा घर लौट आया। उस ने अपने इर्द-गिर्द बाडा खडा कर लिया। यह भी भूल गया कि वह कैद है।

बाहर की दुनिया से उमे डर लगने लगा।

जहाज पर आयी तब यह हालत थी। पानगृह मे तुम ताश खेल रहे थे। तुम जोर से ठहाका मार कर खुले दिल से हँसे। मेरा ध्यान तुम्हारी तरफ गया। बॉब, 'ओल्ड टेस्टामेण्ट' मे जेरिकोनगर की कहानी है। उस नगर की चहार-दीवारी इस्राइलियो के आगमन की तुरही की आवाज मे काँपी और ढह गयी। नगर मुक्त हो गया। तुम्हारे निर्भय हास्य के निनाद से मेरे मन के इर्द-गिर्द की दीवारें भी इसी तरह ढह गयी! मेरा हृदय-नगर तुम्हारे स्वागत के लिए आतुर हो उठा! और हमारी निगाहे मिल गयी! ओह! देह पर खडे रोमाच थे उस स्वागत के बन्दनवार! हृदय की धडकन उस आनन्द का जयघोष!

कई बार सोचती हूँ, हम स्त्रियाँ पुरुषो से प्रेम नही करती, अपने मनोधर्म से करती हैं। हमारी अपेक्षाएँ होती है। आशाएँ होती हैं। जहाँ पूरी होने की सम्भावना दिखाई देती है उसी स्थान पर हमारा मन लगता है। एकाध खो गया तो दूसरा उसी तरह का जब तक नजर नही आता तब तक मन चुपचाप पडा रहता है। नजर आते ही आखें खोल देता है, जाग उठता है। परलोक-विद्या की पुस्तको मे मै ने पढा है। जिन लोगो के सिर शक्ति आती है वे कुछ विशेष स्थानो पर विशेष वातावरण का आभास होते ही होश खो बैठते हैं। प्रेम की प्रभाव-शक्ति भी इसी तरह प्रेम के तीर्थ-दर्शन से जाग उठती है। तुम इसे बेईमानी कहोगे?

तुम्हारी तरफ मेरा ध्यान पहली बार इसी तरह गया। तुम मे कार्ल की शान है। जिस रोज हम मिले, उस रोज तुम ने कपडे भी ढंग से नही पहने थे। लेकिन वह लापरवाही तुम्हारे आत्मविश्वास की साक्षी थी। कार्ल ही की तरह तुम्हारा हास्य कानो मे गूँज उठता है, बोलना मन को निनादित कर देता है! मन्नान मे अनुहार था, लेकिन तुम प्रेम का खेल भी युद्ध की तरह खेलते हो! इच-इच पीछे हटते हो तो वह भी खुद घायल हो कर या दूसरे को कर के! और मेरे प्यारे, जब जीतते हो तब भी खुद ही हारने की कितनी मोहक शिष्टता दिखाते हो!

अनेक दु:खो के आघातो से, आशकाओ से, भय से मेरा कलेजा दहल जाता है। उसी हृदय को तुम ने स्वीकार किया। ईसा की सिर्फ एक नजर से प्याले

का पानी सुन्दर मद्य बन गया। चारो ओर से अवरुद्ध मेरे गँदले जीवन में तुम्हारी स्वीकृति ने आशा की आरक्तता भर दी। सदा कठोर दिखाई पड़ने वाली तुम्हारी आँखो मे कभी-कभी आर्द्रता झलक आती है। गहराइयो मे छिपे उस झरने की तलाश करने के लिए मन उत्सुक होता है। तुम्हारी कठोरता को कितना भी खोदना पड़े, उस के लिए चाहे जितना परिश्रम करना पड़े, प्राण तड़पें, फिर भी उस मे आनन्द मिलता है। और अन्त मे थक कर मन का पागल पंछी तुम्हारे हाथो मे सौंपते ही तुम स्वयं पल-भर मे नाजुक बन जाते हो! मधुर शब्दो के फलो के, कल्पनाओ के हिण्डोले बांध देते हो, उन पर उसे झुलाते रहते हो।

यही प्रीति का अपार वैभव अपने ओछे हाथो लूट लेने का मै ने बार-बार यत्न किया। फिर भी वह शेष ही रहा! मै तुम्हें चाहती हूँ, बॉब! लेकिन तुम्हे पा नही सकती, इस लिए मन शतश विदीर्ण हो जाता है!

—हॅरी